प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

अप्रैल–जून, 2026





कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय



भारत ने पिछले कुछ दशकों में कृषि के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त कर विश्व पटल पर अपनी एक सशक्त पहचान स्थापित की है। आज देश केवल खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर ही नहीं, बल्कि अनेक कृषि एवं बागवानी उत्पादों के उत्पादन में विश्व के अग्रणी देशों में शामिल है। भारत दुग्ध उत्पादन में विश्व में प्रथम, दालों का सबसे बड़ा उत्पादक तथा फल, सब्जी, मसाले, बाजरा और मत्स्य उत्पादन के प्रमुख देशों में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा चुका है। कृषि निर्यात में निरंतर वृद्धि, डिजिटल तकनीकों का बढ़ता उपयोग, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की दिशा में प्रयास तथा किसानों की नवाचार अपनाने की क्षमता भारतीय कृषि की नई पहचान बन रही है। यह सफलता हमारे किसानों के अथक परिश्रम, वैज्ञानिकों के अनुसंधान, कृषि विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों के योगदान तथा सरकार की दूरदर्शी नीतियों का संयुक्त परिणाम है।

यद्यपि भारतीय कृषि ने अभूतपूर्व प्रगति की है, फिर भी इसके समक्ष अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। जलवायु परिवर्तन, घटते प्राकृतिक संसाधन, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, जल संकट, नई कीट एवं रोग समस्याएँ, उत्पादन लागत में वृद्धि, फसलोत्तर प्रबंधन की कमियाँ तथा कृषि उत्पादों के बेहतर मूल्य सुनिश्चित करना आज की प्रमुख आवश्यकताएँ हैं। इसके साथ ही कृषि को अधिक टिकाऊ, लाभकारी और युवाओं के लिए आकर्षक बनाने की आवश्यकता है। बदलते वैश्विक परिदृश्य में कृषि को विज्ञान, प्रौद्योगिकी और उद्यमिता के साथ जोड़ना समय की माँग बन चुका है।

इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए भारत सरकार ने अनेक महत्त्वपूर्ण पहलें प्रारम्भ की हैं। डिजिटल एग्रीकल्चर मिशन, एग्रीस्टैक, पीएम-किसान, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, राष्ट्रीय प्राकृतिक कृषि मिशन, ई-नाम, किसान ड्रोन, कृषि अवसंरचना निधि, एफपीओ प्रोत्साहन कार्यक्रम तथा विकसित कृषि संकल्प अभियान जैसी पहलें कृषि को आधुनिक, समावेशी एवं तकनीक-संचालित बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), बिग डेटा, रिमोट सेंसिंग, ड्रोन तथा सटीक कृषि (Precision Agriculture) जैसी नवीन तकनीकों का उपयोग खेती को अधिक दक्ष, संसाधन-संरक्षण आधारित तथा लाभकारी बना रहा है। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप किसानों की आय में वृद्धि, जोखिम में कमी, गुणवत्तापूर्ण उत्पादन तथा कृषि क्षेत्र में नवाचार और उद्यमिता को नई गति मिल रही है।

भा.कृ.अनु.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, अपने अनुसंधान, शिक्षा एवं प्रसार कार्यक्रमों के माध्यम से इन राष्ट्रीय प्रयासों को निरंतर सशक्त बना रहा है। संस्थान द्वारा विकसित उन्नत किस्में, आधुनिक कृषि तकनीकें, डिजिटल विस्तार सेवाएँ तथा किसानों के लिए वैज्ञानिक परामर्श देशभर में कृषि विकास को नई दिशा प्रदान कर रहे हैं। अनुसंधान प्रयोगशालाओं से लेकर खेत तक ज्ञान के प्रभावी प्रसार में संस्थान की भूमिका सदैव अग्रणी रही है।

आज कृषि एक परिवर्तनशील दौर से गुजर रही है। वैश्विक व्यापार की बदलती परिस्थितियाँ, जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव, प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ता दबाव तथा उपभोक्ताओं की बदलती आवश्यकताएँ खेती के स्वरूप को निरंतर बदल रही हैं। ऐसे समय में केवल पारंपरिक कृषि पद्धतियों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। आधुनिक विज्ञान, उन्नत प्रौद्योगिकी, डिजिटल कृषि, सटीक खेती (प्रिसिजन फार्मिंग), कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित समाधान तथा नवाचारों को अपनाना समय की आवश्यकता बन गया है।

अनियमित वर्षा, बढ़ता तापमान, भूमि की उर्वरता में कमी, जल संसाधनों का क्षरण तथा नए कीट एवं रोग किसानों के सामने गंभीर चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर बढ़ती उत्पादन लागत और बाजार की प्रतिस्पर्धा किसानों की आय को भी प्रभावित कर रही है। इन परिस्थितियों में कृषि का विविधीकरण, मूल्य संवर्धन, प्राकृतिक संसाधनों का सतत प्रबंधन, कृषि-आधारित उद्यमिता तथा वैज्ञानिक तकनीकों का प्रभावी उपयोग ही किसानों को अधिक लाभकारी, टिकाऊ और आत्मनिर्भर कृषि की दिशा में आगे बढ़ा सकता है। समय की मांग है कि किसान ज्ञान, नवाचार और आधुनिक तकनीक के समन्वय से भविष्य की चुनौतियों का सामना करते हुए समृद्ध कृषि व्यवस्था का निर्माण करें।

'प्रसार दूत' के अप्रैल–जून, 2026 अंक में कृषि एवं बागवानी के समसामयिक और उपयोगी विषयों को सम्मिलित किया गया है। इस अंक में उन्नत खेती, अनाज एवं नींबूवर्गीय फसलों में सूक्ष्मपोषक तत्वों का प्रबंधन, भारत में ग्रामीण उन्नति, फलों की उच्च घनत्व पादप पद्धति, कृषि में समन्वित जल प्रबंधन, आधुनिक बागवानी में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) की उपयोगिता, फूलों के मूल्य संवर्धन द्वारा आय एवं रोजगार, दीवारों पर बागवानी (वर्टिकल गार्डनिंग), फलों के अवशेषों का स्वास्थ्य पर प्रभाव, बीटी तकनीक की भूमिका, गमलों में जैविक खेती, बीज गुणवत्ता एवं अंकुरण, छायादार वनस्पतियों में रोग एवं कीट प्रबंधन तथा जैविक खाद बनाने की उन्नत तकनीकों जैसे विषयों पर विशेषज्ञ लेख प्रकाशित किए गए हैं। हमें विश्वास है कि यह अंक शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों, कृषि प्रसार कर्मियों, उद्यमियों तथा किसानों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा और कृषि के नवीन आयामों को समझने में सहायक बनेगा।

आपके सुझाव एवं प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए सदैव प्रेरणास्रोत हैं। हमें विश्वास है कि आपके सहयोग से 'प्रसार दूत' भविष्य में भी कृषि ज्ञान के प्रभावी प्रसार का एक सशक्त माध्यम बना रहेगा।

संपादक

प्रसार दूत

अप्रैल-जून, 2026

वर्ष 31 **अंक 2** **2026**

संरक्षक
डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव
निदेशक
डॉ. रविन्द्र पडारिया
संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक
डॉ. ए.के. सिंह

सम्पादक
डॉ. एन.वी. कुंभारे

सम्पादक मंडल
डॉ. मधुबाला ठाकरे
डॉ. मलखान सिंह गुर्जर
डॉ. सुभाष बाबू
डॉ. गिरजेश महरा
डॉ. वाई पी सिंह
डॉ. परगट सिंह

तकनीकी सहयोग
श्री विजय सिंह जाटव
श्री लक्खी राम मीणा
श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता:
कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
फोनः 011-25841039, 011-25841670
ई-मेंलः incharge_atic@iari.res.in
वेबसाइटः www.iari.res.in

वार्षिक शुल्क ₹ 150/- मनीआर्डर द्वारा

विषय सूची **पृष्ठ संख्या**

सम्पादकीय

1. ग्वार की उन्नत खेती 1
2. कृषि में समुचित जल प्रबंधन 4
3. अनाज फसलों में सूत्रकृमियों की समस्याएँ एवं प्रबंधन 7
4. आधुनिक बागवानी में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) टूल्स की उपयोगिता 10
5. फूलों में मूल्य संवर्धन द्वारा आय सृजन एवं रोजगार 14
6. नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि प्रबंधन 20
7. फसल अवशेष का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव 23
8. दीवारों पर बगीचा: वर्टिकल गार्डनिंग की नई सोच 26
9. खरीफ सब्जियों में रोग एवं कीट प्रबंधन 29
10. जैविक खाद बनाने की उन्नत तकनीकी 33
11. गमलों में जैविक खेती 36
12. आधुनिक कृषि में परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी) की भूमिका 39
13. भारत में ग्रामीण उद्यमिता: ग्रामीण विकास के लिए उत्प्रेरक 42
14. बीज की गुणवत्ता और अंकुरण: सफल खेती की नींव 47
15. फसलों के अदृश्य शत्रु पादप परजीवी सूत्रकृमि एवं प्रबंधन: किसानों की आय बढ़ाने मे सहायक 50
16. एक दूरदर्शी कृषिउद्यमी और मुर्गीपालन उद्योग के अग्रणी : रविन्द्र माणिकराव मेटकर 52

ग्वार की उन्नत खेती

लोकेश कुमार जैन
कृषि अनुसंधान केंद्र, श्रीगंगानगर

ग्वार एक महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय फलीदार फसल है जिसे बीज, हरे चारे, हरी खाद, गोंद और सब्जी के रूप में उगाया जाता है। इसका चारा और दाना दोनों ही पौष्टिक होते हैं; इसके दानें में प्रोटीन (15-18 प्रतिशत), फाइबर (25-30 प्रतिशत), वसा और खनिज (कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम) भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। यह अपनी सूखा-रोधी क्षमता और मिट्टी को सुधारने वाले गुणों के लिए जानी जाती है। ग्वार के बीज का उपयोग पशुओं के लिए सांद्र आहार के रूप में और गोंद निकालने के लिए किया जाता है ग्वार के बीज में 33 प्रतिशत गोंद होती है और यह विदेशी मुद्रा कमाने का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इस गोंद का इस्तेमाल औषधि निर्माण, खनिज, कपड़ा, सौंदर्य प्रसाधन, विस्फोटक, कागज़, खाद्य प्रसंस्करण जैसे कई उद्योगों में किया जाता है। बीज से गोंद निकालने के बाद जो ग्वार की खली बचती है, वह पशुओं के लिए एक उच्च प्रोटीन वाला सांद्र आहार है। सूखा सहने की क्षमता के कारण, यह वर्षा-आधारित (बारानी) क्षेत्रों के लिए चारे की एक बहुत ही कीमती फसल है। ग्वार पशुओं के लिए एक बहुत ही पौष्टिक फलीदार चारा है। इसकी सूखी फलियों और छिलके को पशु बड़े चाव से खाते हैं। दलहनी फसल होने के कारण यह राइजोबियम जीवाणुओं द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिरीकरण करने की क्षमता रखती है जिससे मृदा की गुणवत्ता व उत्पादकता बढ़ती है। दुनिया भर में, भारत ग्वार का सबसे बड़ा उत्पादक देश है और राजस्थान राज्य देश के कुल ग्वार का 70 प्रतिशत से अधिक उत्पादन करता है। इसके अलावा ग्वार हरियाणा, गुजरात, पंजाब, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र राज्यों में उगाई जाती है।

जलवायुः ग्वार के इष्टतम विकास के लिए गर्म और शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। ग्वार की खेती को कम बारिश वाले क्षेत्रों में या जहाँ औसतन 300-400 मि मी बारिश होती है, वहाँ सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। बीज के बेहतर अंकुरण के लिए 25-30 डिग्री सेल्सियस का तापमान सबसे अच्छा रहता है। इसमें फूल और फलियाँ बनतें समय शुष्क वातावरण और कम नमी की आवश्यकता होती है। सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में इस फसल को गर्मियों के मौसम में भी उगाया जा सकता है।

खेत का चुनाव: ग्वार की खेती सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है। अच्छी जल निकासी वाली, मध्यम से हल्की रेतीली दोमट मिट्टी जिसका पी एच मान 7.0-8.5 के बीच हो इसके लिए बहुत उपयुक्त होती है। जिसमें पानी भरा रहता है, ग्वार नहीं बोना चाहिए। ग्वार की खेत सिंचित, असिंचित या दोनों ही परिस्थितियों में की जा सकती है। वर्षा के बाद एक-दो जुताई एवं सुहागा लगाकर खेत तैयार कर लेना चाहिए, ताकि घास फूस नष्ट हो जाये।

उन्नत किस्में

कर्ण ग्वार -1 (आर.जी.आर.12-1)ः यह किस्म वर्ष 2018 में अधिसुचित की गई है तथा दाने व चारे के लिए उपयुक्त है। यह किस्म कम अवधि 82 से 92 दिन में पक जाती है। बीज दर 15-20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर एवं औसत उपज 9.63-11.63 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। यह किस्म जीवाणुओं, पर्ण झुलसा रोग, जड गलन रोग के प्रति सहनशील है। तथा कीट पतंगो का प्रक्रोप भी कम होता है।

कर्ण ग्वार -14 (आर.जी.आर.18-1)ः वर्ष 2022 में अधिसुचित यह किस्म विशेष रूप से राजस्थान के शुष्क व अर्ध-षुष्क क्षेत्रो के लिए विकसित की गई है। यह किस्म मध्यम अवधि 90 से 95 दिन में पक जाती है तथा इसकी उपज क्षमता 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म बैक्टीरियल ब्लाइट और अल्टरनेरिया लीफ स्पॉट रोग के प्रति सहनशील है व इसमें सूखा सहन करने की क्षमता भी पाई जाती है।

आर.जी.सी.1033ः यह 95-105 दिन में पककर तैयार होने वाली किस्म है। इसका पौधा शाखादार व पत्तियाँ खुरदरी, पत्ती के सिरे कम कटाव वाले होते हैं। इस किस्म का पौधा 40-113 से.मी. ऊँचा होता है। इस किस्म में हल्के गुलाबी रंग के फूल होते हैं। फली में दानों का उभार स्पष्ट दिखता है। इसके दाने सलेटी रंग के मध्यम मोटे होते हैं। इस किस्म की औसत पैदावार 15-25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

एचजी 2-20ः इस किस्म का पौधा मध्यम ऊँचाई (95-105 से.मी.), अधिक शाखाओं वाला होता है जिसमें फूल 40-50 दिन बाद आते हैं। इसके पकने की अवधि 110-120 दिन की है तथा औसत उपज 12-16 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। सिंचित या अच्छी वर्षा वाले एवं अच्छे जल निकास वाली भूमि के लिए उपयुक्त है। यह किस्म कम गिरती है तथा बीमारियों के प्रति मध्यम सहनशील है।

आर.जी.सी.1002ः यह 80-90 दिन में पककर तैयार होने वाली अतिशुष्क व कम वर्षा व पानी के अच्छे निकास वाली मिट्टी के लिए तथा ग्वार पैदा करने वाले सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए उपयुक्त किस्म है। इसका पौधा अत्यधिक शाखादार व पत्तियों के किनारे दांतेदार होते है। इस किस्म का पौधा 60-90 से.मी. ऊँचा होता है। इस किस्म में हल्के गुलाबी रंग के फूल आते हैं। इसकी फली 4.5 से 5.0 से.मी. लम्बी होती है। फली में दानों का उभार स्पष्ट दिखता है। इसके दाने मोटे तथा स्लेटी रंग के होते हैं। 100 दानों का वजन 3.1 से 3.57 ग्राम होता है। इस किस्म की औसत पैदावार 10-13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

आर.जी.सी.1066 (लाठी ग्वार): यह किस्म 100-105 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसका पौधा 100-115 सेमी. ऊँचा होता है एवम् इसमें शाखायें नही होती है। इसका दाना सफेद, गुलाबी आभा युक्त होता है। 100 दानों का वजन लगभग 3.5 ग्राम होता है इस किस्म की औसत उपज 12-14 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह यान्त्रिक कटाई हेतु उपयुक्त है।

एच.जी.365: इस किस्म का पौधा छोटा होता है। यह एक शीघ्र पकने वाली किस्म है। यह किस्म 85-100 दिन की अवधि में पक जाती है। इसका दाना छोटा तथा स्लेटी रंग का होता है। दाने की औसत पैदावार 12-14 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है। दाने में गोंद की मात्रा 30 प्रतिशत होती है। कम समय में पकने के कारण इस किस्म की कटाई के बाद राया की फसल ली जा सकती है।

आर.जी.सी.936: यह जल्दी पकने वाली किस्म है जो 100-110 दिन में पककर तैयार हो जाती है। फूल सफेद रंग के होते हैं। उपज 4 क्विंटल प्रति बीघा है। इसमें झुलसा रोग को सहने की क्षमता भी होती है।

आर.जी.सी.986: इसका पौधा 80-120 से.मी. ऊँचा अधिक शाखाओं वाला, इस किस्म की पत्तियाँ खुरदरी पत्ती के सिरे बहुत कम कटाव वाले होते हैं। इसमें फूल 35-50 दिन बाद में आते हैं। इसके पकने की अवधि 115-125 दिन की है। इसकी औसत उपज 10-15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर आती है। दाना स्लेटी, मध्यम आकार का, फली मध्यम लम्बी होती है तथा झुलसा कम लगता है। सिंचित या अच्छी बरसात वाले व अच्छे जल निकास वाली भूमि के लिए उपयुक्त है।

अगेता गुआरा 112: इसके पौधे सीधे, रोएंदार, बिना शाखाओं वाले और मध्यम ऊंचाई (1-1.5 मीटर) के होते हैं। इसकी प्रत्येक गांठ (दवकम) पर फलियों के गुच्छे लगते हैं और इसके दाने मोटे होते हैं। यह किस्म अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के मध्य तक पक जाती है। इसकी औसत उपज 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

गुआरा 80: यह लंबा, तेजी से बढ़ने वाला, रोएंदार और बहुत अधिक शाखाओं वाला प्रकार है। यह ग्वार के पत्तों के झुलसा रोग और तना टूटने के प्रति प्रतिरोधी है। इस किस्म की प्रत्येक गांठ पर फलियों के गुच्छे नहीं लगते। इसकी फलियां मध्यम आकार की होती हैं और बीज गोल-चपटे आकार के तथा हल्के भूरे रंग के होते हैं। यह देर से पकने वाली किस्म है और 20 क्विंटल दाना और लगभग 300 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा देती है। इसकी खेती बरानी और सिंचित, दोनों ही परिस्थितियों में की जाती है।

बीज की मात्रा एवं बुवाई की विधि: बुवाई की परिस्थितियों के अनुसार 16-20 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। ग्वार की बुवाई बीज-सह-उर्वरक ड्रिल या दो पोरों से करनी चाहिए और कतार की दूरी 30 सेमी. रखनी चाहिए। नहर सिंचित क्षेत्र के लिये ग्वार में ज्यामिति कतार से कतार की दूरी 45 सेमी पर बीजाई करें तथा बीज दर की मात्रा 12 किलो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से उपयोग में लेंवे। बीज को 4-6 सेमी से ज़्यादा गहरा नहीं बोना चाहिए। वर्षा-आधारित और कम उर्वरता वाली मिट्टी की स्थितियों में फसल की बुवाई बारिश शुरू होते ही कर देनी चाहिए लेकिन सिंचित और उच्च उर्वरता वाली स्थितियों में फसल की बुवाई जुलाई के पहले पखवाड़े में की जानी चाहिए। ग्वार के बाद दूसरी फसल नहीं लेनी हो तो बुवाई जुलाई के अंत तक भी की जा सकती है। ग्वार को 'जीरो-टिलेज' (बिना जुताई) विधि से भी उगाया जा सकता है जिससे उतना ही हरा चारा प्राप्त होता है जितना कि पारंपरिक या 'जीरो-टिल' विधि से बोए गए गेहूँ के बाद मिलता है। चारे के लिए 45-50 किलोग्राम बीज का उपयोग करें। उत्तरी भारत के सिंचित क्षेत्रों में, चारे के लिए ग्वार की फसल गर्मियों (मार्च-जुलाई) में भी बोई जा सकती है। बीज उत्पादन के लिए बीजों की बुवाई 'केरा' या 'पोरा' विधि से या फिर 'सीड ड्रिल' मशीन का इस्तेमाल करके करनी चाहिए जबकि चारे या हरी खाद के लिए बीजों को खेत में छिड़ककर बोया जा सकता है।

बीज उपचार: बेहतर जड़-ग्रंथियों के निर्माण के लिए राइजोबियम एवं फॉस्फोरस घोलक जीवाणु पाउडर के तीन पैकेट एक हेक्टेयर क्षेत्र के बीज को बुवाई से पूर्व उपचारित कर बोने पर नत्रजन एवं फॉस्फोरस उर्वरकों की बचत की जा सकती है। अन्य दलहनी फसलों की भाँति ग्वार को भी राईजोबियम जीवाणु कल्चर से उपचारित कर बुवाई करने से पैदावार में बढ़ोतरी पाई जाती है। बीज को कैप्टन या थिरम से 2-3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित किया जाना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक: सिंचित क्षेत्रों में बुवाई से पहले ग्वार के लिए 20 किलो नत्रजन तथा 40 किलो फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व डालें। बरानी ग्वार में फॉस्फोरस की मात्रा आधी दर से प्रयोग करें।

सिंचाई: यदि वर्षा का वितरण समान रूप से हुआ हो, तो फसल को किसी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। अन्यथा एक या दो बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ सकती है। बुवाई के तीन या चार सप्ताह बाद अच्छी वर्षा ना हो तो प्रथम सिंचाई 25 से 30 दिन बाद अर्थात् फसल की बढ़वार के समय करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई माह अगस्त के तीसरे सप्ताह या 60 से 65 दिन की फसल में फलियों में दाना बनते समय करनी चाहिए। यदि ग्वार के बाद रबी की फसल लेनी हो तो तीसरी सिंचाई नहीं करें क्योंकि इसके बाद सिंचाई करने में फसल पकने में विलम्ब हो जाता है। हालाँकि, सितंबर के तीसरे सप्ताह के बाद फसल की सिंचाई नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इससे फसल के पकने में देरी होती है और बीज की गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ता है। गर्मियों की फसल के लिए 12-15 दिनों के अंतराल पर 4-5 बार सिंचाई की आवश्यकता होती है।

निराई-गुड़ाई: यदि खेत में खरपतवार हो तो निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। यह क्रिया फसल की एक माह की अवस्था से पूर्व सम्पन्न कर देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: ग्वार की फसल में वार्षिक घास तथा चौडे पत्ते वाले खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण हेतु करने के लिए पेन्डामेथलिन 30 प्रतिशत ई.सी 0.75 किग्रा फसल बुवाई के 1 से 3 दिन बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व 400 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से घोलकर छिड़काव करें तथा इमेजाथाईपर 35 प्रतिशत या इमेजामोक्स 35 प्रतिशत डब्ल्यू.जी 40 ग्राम फसल बुवाई के 25 दिन बाद 400 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। इमेजाथाईपर 10 प्रतिशत एस.एल. 40 ग्राम फसल बुवाई के 30-35 दिन बाद 400 से 500 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से घोलकर एक समान छिड़काव करें। इस खरपतवारनाशी द्वारा उपचारित खेत में आगामी रबी मौसम में सरसों फसल की बुवाई करने पर उसकी अंकुरण क्षमता प्रभावित हो सकती है। यदि उक्त खेत में सरसों की बुवाई करनी हो तो बीज की मात्रा ज्यादा डाले।

कीट नियंत्रणः ग्वार की फसल में प्रायः तेला (जेसिड) सफेद मक्खी तथा चेंपा (एफिड) नामक कीट नुकसान पहुंचाते हैं। इनकी रोकथाम हेतु डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1000 मि.ली. मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी. 1000 मि.ली. मेलाथियान 50 ई.सी. 1200 मि.ली. मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 24 किलो फेनवलरेट 0.4 प्रतिशत चूर्ण 20 किलो या थॉयोमिक्थॉक्सॉम 25 डब्ल्यू.जी. 0.50 ग्राम/लीटर पानी रसायनों में से किसी एक का छिड़काव/भुरकाव प्रति हेक्टेयर की दर से करें। आवश्यकतानुसार भुरकाव को 15-20 दिन बाद दोहराया जा सकता है। कीटों से होने वाले नुकसान को कम करने के लिए, सुझाई गई कीटनाशकों का इस्तेमाल करने के साथ-साथ खेती से जुड़े अन्य सस्य तरीकों को भी अपनाया जा सकता है। सितंबर-अक्टूबर के महीनों में फसल पर 'बिहार हेयरी कैटरपिलर' नामक कीट का हमला होता है। इस कीट के अंडों के गुच्छों और झुंड में रहने वाले छोटे-छोटे लार्वा को इकट्ठा करके नष्ट कर देने से इस पर नियंत्रण पाया जा सकता है। ग्वार की फसल में तेला (जेसिड़) व सफेद मक्खी का प्रकोप होने पर *बॉवेरिया बैसियाना* (108 सी.एफ. यू/मिली) 800 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण:

जीवाणु झुलसा रोग: ग्वार में जीवाणु झुलसा रोग (बैक्टीरियल ब्लाइट) की रोकथाम के लिए 10 लीटर पानी में 5 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का घोल बनाकर बीज को 10-15 मिनट तक भिगोकर बीजोपचार करना चाहिए तथा खड़ी फसल में 100 लीटर पानी में स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 20 ग्राम व कॉपर आक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यु पी 200 ग्राम के हिसाब से घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

पत्तों पर झुलसा रोग: इस रोग के प्रकोप होने पर 100 लीटर पानी में स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 5 ग्राम या प्लांटोमाइसीन 50 ग्राम या एग्रीमाइसिन 30 ग्राम के हिसाब से छिड़काव करें। झुलसा रोग रोकथाम हेतु जिनेब या मैन्कोजेब का 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव जुलाई के अन्त या अगस्त तक करें।

जड़ गलन नियन्त्रण: ग्वार में जड़गलन की जटिल समस्या (फ्यूजेरियम तथा मेक्रोफोमीना फंगस) के नियन्त्रण के लिए बीज को कार्बेन्डाजिम 2.0 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज उपचार करें। ट्राईकोड्रमा विरिडी/हरजिएनम 2.5 किलो को 100 किलो गोबर की खाद/हेक्टेयर की दर से उपयोग से 15 दिन पहले भिगोकर छाया में रखें। इसे बिजाई के समय भूमि में देने से इस रोग का प्रभावी नियन्त्रण पाया गया है। ग्वार में जड़गलन नियंत्रण के लिये बीज को ट्राईकोडर्मा हरजिएनम 10 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करें तथा ट्राईकोडर्मा हरजिएनम 2.5 कि.ग्रा./हेक्टेयर को 200 किग्रा गोबर की खाद में मिलाकर उचित नमी पर 15 दिन के लिये छाया में रखे व बुवाई के समय भूमि में मिला दें। तना गलन/जड़गलन/चारकोल गलन रोगग्रसित खेत में मई-जून माह में बुवाई के करीब एक माह पूर्व सरसों के अवशेष (डंठल, पत्ती आदि) 2.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डाल कर पानी लगा दें। ग्वार के बीज को बुवाई से पूर्व बैसीलस थ्यूरेनजिनेसिस 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करें। पीड़कनाशी के प्रकार, मात्रा और उसके इस्तेमाल का समय उस इलाके की मिट्टी और मौसम के प्रकार पर निर्भर करता है। पीड़कनाशी के इस्तेमाल करने से पहले, कृपया अपने कृषि जलवायु, खंड की पैकेज ऑफ़ प्रैक्टिस के बारे में पता कर लें।

कटाई एवं गहाईः बुवाई की परिस्थिति के अनुसार फसल अक्टूबर के अन्त से नवम्बर तक पकती है। पूरी पकने पर कटाई करके फसल को सुखाने के लिए खेत में छोड़ दें या कटी हुई फसल खलिहान में लाकर सुखा लें। वर्षा हो जाने पर या फसल अच्छी तरह न सूखने पर दाना काला पड़ जाता है। इसके लिए फसल को सूखने में सावधानी बरतनी चाहिए। यदि फसल का उपयोग हरी खाद के लिए करना हो, तो फूल आने की शुरुआत में ही इसे मिट्टी में मिला देना चाहिए जबकि यदि अनाज के लिए कटाई करनी हो, तो फसल के पूरी तरह पक जाने पर ही कटाई करनी चाहिए।

उपजः उन्नत विधियों से खेती करने पर ग्वार की उपज 12-15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर ली जा सकती है। करीब इतनी ही मात्रा में सूखे चारे की उपज प्राप्त हो जाती है।

कृषि में समुचित जल प्रबंधन

आलोक सिंह जयारा[1], सुनील कुमार[1] एवं रमनजीत कौर[2]
[1]डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, बिहार
[2]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कृषि में सतत् विकास को सुनिश्चित करने के लिए कुशल जल प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। विश्व में सीमित ताज़े जल का लगभग 70–85% कृषि में उपयोग होता है, जबकि बढ़ती जनसंख्या और घटती प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता, जल तनाव की स्थिति को स्पष्ट करती है। अनियमित सिंचाई से या तो फसल प्रभावित होती है या मिट्टी का लवणीकरण दीर्घकालिक हानि पहुंचाता है। ऐसे में संरक्षित कृषि, वर्षा जल संचयन और आधुनिक सिंचाई तकनीकें (ड्रिप, स्प्रिंकलर, सेंसर आधारित सिंचाई) जल संरक्षण के प्रभावी विकल्प हैं। यह न केवल जल उत्पादकता बढ़ाती हैं बल्कि मृदा स्वास्थ्य, पैदावार और पर्यावरणीय संतुलन को भी सुदृढ़ करती हैं। अतः उपलब्ध जल के वैज्ञानिक और संतुलित उपयोग से ही कृषि का सतत् विकास संभव है।

मुख्य शब्द: समुचित, कृषि, जल प्रबंधन, *सतत् विकास*

कृषि में सतत् विकास को बढावा देने के लिए कुशल जल प्रबंधन एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है। बढ़ती जनसँख्या तथा शहरीकरण के मद्देनजर विश्व में ताजा पानी की मांग बढ़ती जा रही है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान में रखना जरूरी है कि सन 2050 तक विश्व जनसँख्या तक़रीबन 1000 करोड़ हो जायेगी। पृथ्वी में कुल उपलब्ध जल का मात्र 2.5 प्रतिशत ही ताजा जल है जिसमे से 70 प्रतिशत कृषि प्रयोग में लाया जाता है। भारत में यही आंकड़ा 75-85 प्रतिशत है। नवीन आंकड़ों के अनुसार भारत में वार्षिक भूजल निष्कर्षण 239.16 अरब घन मीटर है जिसमे से 208.49 अरब घन मीटर कृषि कार्यों में उपयोग किया जाता है। भारत में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 2021 तथा 2031 में क्रमशः 1486 घन मी0 तथा 1367 घन मी0 आंकलित की गयी है। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखित करना उचित होगा कि जब वार्षिक जल उपलब्धता 1700 घन मी0 से कम होती है तो वह जल तनाव स्थिति को दर्शाता है। कृषि में आवश्यकता से अधिक अथवा आवश्यकता से कम जल का प्रयोग सतत् विकास के दिशा के विपरीत है। कम जल से होने वाले दुष्प्रभाव तत्कालीन फसल पर देखने को मिलते हैं जबकि आवश्यकता से अधिक जल के दुष्प्रभाव कुछ समय के पश्चात् देखने को मिलते हैं जैसे कि मिट्टी में लवण का बढ़ना जो कि दीर्घकाल में मृदा को नमकयुक्त बना देता है। अतः कृषि के सतत् विकास के लिए भी समुचित जल प्रबंधन अति आवश्यक है।

कुशल जल प्रबंधन को तीन घटकों के अंतर्गत समझा जा सकता है। पहला कि जब भी हम प्राकृतिक संसाधनों के बचाव की बात करते हैं तो निश्चित ही हम मृदा में उपस्थित जल का भी बचाव करते हैं। साथ ही इसके अंतर्गत आने वाली पद्दतियों में कृषि में जल की खपत को भी कम किया जा सकता है। दूसरा वर्षा के जल को संग्रहित करके हम ना सिर्फ वर्षा के जल को खेती में उपयोग कर सकते हैं बल्कि भूजल का भी पुनर्भरण कर सकते हैं। वर्षा के जल को बचने से हम मिट्टी की सतह पर होने वाले प्रवाह को भी कम कर सकते हैं जिससे मिट्टी के अपरदन में कमी आएगी और हम उत्पादकता को बचा सकते है। तीसरा आधुनिक तकनीक से जल प्रबंधन करने से हम पैदावार को भी बड़ा सकते हैं और कृषि में जल उत्पादकता को भी बढ़ा सकते हैं।

प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की गति बहुत तेज हो गई है। कृषि में हरित क्रान्ति आने के पश्चात् मृदा का अप्रतिबंधित उपयोग हुआ है जिससे कि नकारात्मक प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। ऐसे में संरक्षित कृषि एक महत्वपूर्ण आयाम है जिससे कि इन संसाधनों का सतत् उपयोग कर अपने भविष्य को भी सुरक्षित कर सकते हैं। संरक्षित कृषि के तीन मुख्य स्तम्भ हैं न्यूनतम मृदा विभोक्ष, स्थायी मृदा आच्छादन तथा फसल विविधिकरण। न्यूनतम मृदा विभोक्ष के तहत हमें खेत की मिट्टी को कम से कम बाधित करना चाहिए। इसमें न्यूनतम जुताई तथा शून्य जुताई मुख्य हैं। न्यूनतम जुताई के अंतर्गत प्राथमिक जुताई को पूरी तरह से वर्जित किया जाता है तथा द्वितीयक जुताई को केवल बीज बुवाई की बारीक पट्टी पर किया जाता है। इसी तरह से शून्य जुताई इसका एक चरम रूप है जिसमे किसी भी तरह की जुताई को वर्जित किया जाता है और बीज की बुवाई की जाती है। स्थायी ऊँची क्यारी एक अन्य तकनीक है जिसमे खेत को ऊँची क्यारी तथा एकांतर रूप से नालियों को बनाया जाता है। इन क्यारियों में भी जुताई को प्रतिबंधित किया जा सकता है। इस तरह की तकनीकों को अपनाने से फसल अवशेष मृदा पर बने रहते हैं तथा मिट्टी के संरचना का भी बचाव होता है। न्यूनतम तथा शून्य जुताई करने से ट्रैक्टर तथा अन्य तरह के मशीन के इस्तेमाल में कमी आती है जिससे मृदा संघनन में कमी आती है। मिट्टी से किसी तरह से छेड़छाड़ ना होने की स्थिति में मृदा जल वाष्पीकरण में भी कमी आती है। तेज वर्षा के प्रभाव में भी इस तरह की स्थिति में मृदा की जल सोखने की क्षमता में वृद्धि होती है और सतह जल बहाव में कमी आती है। स्थायी ऊँची क्यारी में नाली द्वारा जल देने पर जल की खपत भी कम होती है।

संरक्षित कृषि का द्वितीय मुख्य आयाम मृदा का स्थायी आच्छादन है। फसलों की पंक्तिवार बुवाई के पश्चात् दो पक्तियों के बीच की खुली जगह से जल वाष्पीकरण होता है। ऐसी जगह को अच्छादित करने से मृदा सतह और वायुमंडल का सीधा संपर्क टूटता है और वाष्पीकरण में कमी आती है। आच्छादन विभिन्न तरह की वस्तुओं से किया जाता है जैसे फसल अवशेष, जीवित फसलों से आच्छादन, मृदा आच्छादन, कंकण द्वारा आच्छादन तथा प्लास्टिक आच्छादन। इससे मृदा की जल सोखने की क्षमता बढ़ती है तथा खरपतवार में कमी आती है। खरपतवार भी पर्ण द्वारा होने वाले वाष्पोत्सर्जन से मृदा के संगृहीत जल को कम करते हैं। फसल अवशेष द्वारा आच्छादन करने से मृदा में जीवाश्म कार्बन की भी वृद्धि होती है।

फसल विविधिकरण संरक्षित कृषि का तीसरा महत्वपूर्ण स्तम्भ है। फसलों में विविधिकरण करने से जड़ प्रणाली संरचना भी भिन्न होती है जिससे फसलों में अलग अलग गहराई से जल का दोहन होता है। सह फसली खेती में एकल फसली खेती के बराबर जल देने से अधिक पैदावार होती है जिससे जल उत्पादकता में वृद्धि होती है। फसल विविधिकरण से खाद उत्पादकता में भी वृद्धि होती है तथा खेती में कीटों तथा व्याधियों के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या में वृद्धि होती है।



मक्का में उपसतही ड्रिप सिंचाई: प्रत्येक इनलाइन लेटरल (L) के साथ मक्के की एक पंक्ति, ड्रिप इनलाइन (R) के आसपास मक्का की जड़ प्रणाली का पैटर्न



एक पंक्ति सूर्यमुखी के साथ एक लेटरल (R) **एक पंक्ति मक्का के साथ एक लेटरल (R)**

सूर्यमुखी और मक्का में सतही ड्रिप सिंचाई

संरक्षित कृषि में खेत के समतलीकरण का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। समतल खेत में पानी का फैलाव भी सामान होता है जिससे फसलों को पानी की कमी या अधिकता नहीं होती है। इन दोनों स्थितियों में फसल की पैदावार में कमी आती है जिससे जल उत्पादकता घटती है। आधुनिक युग में लेज़र लेवलर द्वारा सटीक समतलीकरण होता है जिससे उच्चतम उत्पादकता प्राप्त की जा सकती है। समतलीकरण करने से जल उत्पादकता में 30 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की जा सकती है।

वर्षा जल का उचित प्रबंधन करने से भी कृषि में जल की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। वर्षा जल एकत्र करने हेतु घर की छत पर जल संचयन कर उसे पाईपलाइन तथा फ़िल्टर के माध्यम से टैंक में संग्रहित कर सकता है। इसके अलावा सामुदायिक स्तर पर तथा ग्रामीण स्तर पर खुले टैंक का निर्माण कर सकता है। पूर्व में उपस्थित टैंक का पुनर्निर्माण द्वारा भी वर्षा के जल को संग्रहित किया जा सकता है। इस जल संग्रहण के पश्चात् यह सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि संग्रहित जल को केवल वर्षा जल के अभाव में पूरक सिंचाई के रूप में ही इस्तेमाल किया जाए। खेत में भी मेड द्वारा जल संग्रहण किया जा सकता है जिससे मृदा में जल सोखने के समय में वृद्धि होती है। इसी तरह से कुछ और तरीकों से भूजल पुनर्भरण को भी बढ़ावा दिया जा सकता है। इनमे मुख्या है रिसाव तालाब जिसमे कि बिना लाइनिंग के टैंक अथवा गड्ढे का निर्माण किया जाता है और वर्षा के जल का रिसाव होता है। बरसाती नालों के ऊपर छोटे छोटे (स्थाई अथवा अस्थायी) लघु बाँध बनाये जाते हैं जो कि पानी के वेग को कंम करते हैं तथा भूजल पुनर्भरण का कार्य भी करते हैं। इसी तरह से नाले का बाँध बनाकर भूजल पुनर्भरण को बढ़ावा दिया जा सकता है।

उपर्युक्त तकनीक खेती में जल संरक्षण तथा पुनर्भरण में सहायक हैं। जल संरक्षण के उपरान्त तथा कुल उपलब्ध जल द्वारा सिंचाई आधुनिक तकनीकों द्वारा सुलभ की जा सकती है। मुख्यतः तकनीक हैं बूँद बूँद सिंचाई, फंवारा सिंचाई, रेन गन सिंचाई तथा सेंसर विधि द्वारा सिंचाई। बूँद-बूँद सिंचाई, जिसे टपक सिंचाई या ड्रिप इरिगेशन भी कहा जाता है, जल उपयोग दक्षता की दृष्टि से सबसे सटीक और वैज्ञानिक विधि है। इस प्रणाली में मुख्य लाइन, उपमुख्य लाइन तथा पार्श्व (लेटरल) लाइनों का एक जाल होता है, जो पंप और फ़िल्टर के माध्यम से जल स्रोत या टैंक से जुड़ा होता है। इस विधि में ड्रिपर (Emitter) के माध्यम से पौधों की जड़ों के पास बूँद-बूँद कर पानी छोड़ा जाता है, जिससे नमी सीधे जड़ क्षेत्र में पहुँचती है। इससे फसल की पंक्तियों के बीच का क्षेत्र और खरपतवार दोनों को पानी नहीं मिलता, फलस्वरूप खरपतवार वृद्धि नियंत्रित रहती है और जल उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

इस तकनीक में सिंचाई की आवृत्ति (frequency) अधिक होती है, जो मृदा प्रकार पर निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, रेतीली भूमि में बार-बार सिंचाई की आवश्यकता होती है, जबकि दोमट

भूमि में सिंचाई का अंतराल अपेक्षाकृत अधिक होता है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली में घुलनशील उर्वरकों (water soluble fertilizers) का भी उपयोग किया जा सकता है, जिसे फर्टिगेशन (Fertigation) कहते हैं। इससे पोषक तत्व सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचते हैं, जिससे उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ती है और पौधों की वृद्धि एवं उपज में सुधार होता है। ड्रिप सिंचाई विशेष रूप से बागवानी फसलों जैसे – अंगूर, केला, अमरूद, लीची, आम आदि; सब्जियों जैसे – फूलगोभी, बैंगन, टमाटर, मटर इत्यादि; तथा नकदी फसलों जैसे – गन्ना, कपास, मिर्च आदि के लिए अत्यधिक लाभकारी सिद्ध होती है। इस विधि द्वारा 70 प्रतिशत से अधिक जल की बचत संभव है।

फंवारा विधि द्वारा सिंचाई करना वर्षा के अनुकरणीय होता है। इस विधि में ड्रिप सिंचाई की तरह पाइपलाइन का नेटवर्क होता है जो स्प्रिंकलर के नोजल से जुड़ा होता है। नोजल द्वारा फसल छत्र की उपरी तथा निचली सतह पर सिंचाई की बूँदें गिरती हैं। इस तरह की सिंचाई रेतीली भूमि के लिए उपयुक्त होती है। स्प्रिंकलर द्वारा सिंचाई देने पर 69% तक पानी की बचत होती है। स्प्रिंकलर द्वारा सभी तरह की संकरी पंक्ति में बुवाई जाने वाली फसलों में आसानी से सिंचाई हो जाती है। रेन गन स्प्रिंकलर की तरह का एक सिंचाई यंत्र है जिससे एक बड़े क्षेत्रफल में सिंचाई की जा सकती है। रेन गन विधि से लेबर तथा बिजली की खपत कम होती है। इससे हम किसी भी खेत में कीटनाशक अथवा फफूंदीनाशक का छिड़काव कर सकते हैं। आज का युग सेंसर तथा कृत्रिम बुद्धि का युग है। सेंसर द्वारा मृदा नमी, तापमान तथा आद्रता को अनुभव कर केंद्रीय नियंत्रक इकाई तक पहुँचाया जाता है जिसके पश्चात् सिंचाई का सही समय तथा मात्रा का निर्णय लिया जा सकता है। इसे मोबाइल द्वारा भी नियंत्रित किया जा सकता है।

कृषि में सतत् विकास का आधार उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और उनका वैज्ञानिक एवं उचित उपयोग है। इनमें जल सबसे महत्वपूर्ण और अमूल्य संसाधन है, जिसके बिना कृषि उत्पादन, पर्यावरणीय संतुलन तथा जीवन का अस्तित्व असंभव है। विश्व स्तर पर उपलब्ध कुल जल का केवल 4 प्रतिशत हिस्सा भारत के पास है, जबकि यहाँ की जनसंख्या विश्व की लगभग 17 प्रतिशत है। यह असंतुलन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि भारत में प्रति व्यक्ति वार्षिक जल उपलब्धता विश्व औसत से कहीं कम है। ऐसी स्थिति में जल संसाधनों का संतुलित उपयोग, पुनर्भरण और संरक्षण अत्यंत आवश्यक हो जाता है। भारत में उपलब्ध ताजे जल का लगभग 80 प्रतिशत भाग कृषि कार्यों में प्रयुक्त होता है। यह दर्शाता है कि कृषि क्षेत्र जल उपयोग का सबसे बड़ा उपभोक्ता है। किंतु यह भी सत्य है कि कृषि में जल का अति-उपयोग और अल्प-उपयोग दोनों ही समान रूप से हानिकारक हैं। जल का आवश्यकता से अधिक प्रयोग न केवल जल संसाधनों की बर्बादी करता है, बल्कि यह मृदा अपरदन, लवणीयता, और भूमिगत जल स्तर में गिरावट जैसी गंभीर समस्याएँ उत्पन्न करता है। दूसरी ओर, जल की कमी से फसल वृद्धि में अवरोध, उपज में कमी, और कृषक की आर्थिक हानि होती है।

अतः आवश्यक है कि कृषि में "सटीक सिंचाई प्रबंधन" (Precision Irrigation Management) अपनाया जाए, जिससे जल का उपयोग फसल की आवश्यकता, मिट्टी के प्रकार, और जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप हो। आधुनिक तकनीकों जैसे – ड्रिप सिंचाई, स्प्रिंकलर सिंचाई, रेन गन सिंचाई, तथा सेंसर आधारित स्मार्ट सिंचाई प्रणाली – जल की बचत, उत्पादकता वृद्धि और पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करती हैं। इस दिशा में किसानों को जल-संरक्षण आधारित खेती (Water-Smart Farming) की ओर प्रेरित करना समय की आवश्यकता है। यदि जल का उपयोग वैज्ञानिक तरीके से, समुचित समय और मात्रा में किया जाए, तो न केवल जल संसाधनों की सुरक्षा संभव है, बल्कि कृषि की उत्पादकता, लाभप्रदता और दीर्घकालिक स्थायित्व भी सुनिश्चित किया जा सकता है।

अनाज फसलों में सूत्रकृमियों की समस्याएँ एवं प्रबंधन

राशिद परवेज़, वाघमारे चंद्रमणी दत्तात्रेय एवं पंकज
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण इस की बढ़ती हुई मांग के अनुरूप पूर्ति ना कर पाना भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए एक चिन्ता का विषय हैं। अनाज, दलहन, तिलहन एवं मिलिट्स फसलों के उत्पादन में गिरावट के प्रमुख कारणों में से एक इनको हानि पहुचाने वाले सूत्रकृमि की समस्या हैं। इन फसलों की हानि सूत्रकृमि जनसंख्या घनत्व और अन्य फसल विकास की स्थिति पर निर्भर करती है। सूत्रकृमि की समस्याओं के प्रति कृषकों का उचित समाधान न जानना स्थिति को और भी जटिल बना देता हैं। अतः प्रस्तुत लेख में अनाज फसलों के उत्पादन में बाधा पँहुचाने वाले सूत्रकृमि एवं उनका प्रबंधन हेतू उचित नियन्त्रण तकनीकियों का उल्लेख किया गया है।

धान में सूत्रकृमियों की समस्या एवं प्रबंधन

भारत में धान या चावल सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल है। यह एक प्रमुख खरीफ फसल और आधी से अधिक आबादी का मुख्य भोजन है। यह 25°C से अधिक तापमान और 100 सेमी से अधिक वर्षा वाले गर्म-नम क्षेत्रों जैसे, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब, तेलंगाना में इसकी खेती की जाती है। भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक और सबसे बड़ा निर्यातिक देश है। चावल में ना सिर्फ फाइबर मौजूद होता है बल्कि इसमें विटामिन, कैल्शियम, आयरन, थायमीन और मिनरल्स जैसे पोषक तत्व समाए होते हैं। धान में जड़गांठ सूत्रकृमि (*मिलॉइडोगाइने ग्रेमनिकोला*) नर्सरी में ही पौधों में लग जाता है व पौधों की बढ़वार कम कर देता है। खेत में रोग से प्रभावित पत्तियों में पीलापन किनारे से बीच की तरफ बढ़ता है परिणामस्वरूप पत्तियाँ धीरे-धीरे सूख जाती है। पौधे में फुटाव व बढ़वार कम हो जाता है। पौधों में कम व छोटी बालियाँ बनती है। मुख्यतः यह सूत्रकृमि पौधों की नई जड़ों को भेदकर उनकी बल्कुट (कोर्टेक्स) कोशिकाओं को अपना भोजन बनाते है, जिससे पत्तियाँ भूरी व पीली पड़ जाती है। स्वस्थ पौधों की तुलना में सूत्रकृमि जनित रोगग्रस्त पौधों में अंकुरण कम होता है जिससे पौधे बौने रह जाते है। रोगी पौधों में पुष्पगुच्छ व बालिया कम व छोटी तथा बालियों में दाने कम बनते है जिससे उत्पादन कम होता है।

प्रबंधन

- पौधशाला मै सौर्यीकरण करना चाहिए।
- पौधशाला में कार्बोफ्युरॉन व फोरेट को 2 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से उपचारित करना चाहिए।
- रोपण से पहले अच्छी तरह से कीचड़ (पडलींग) बनाये।
- फसल चक्र के रूप में चना, सरसों, पटसन, तोरई, मटर व मिर्च जैसी फसलों को अपनाना चाहिए।
- सूत्रकृमि सहिष्णु प्रजातियां, जैसे - टी.के.एम. 6, धूमल, सी. एच. 47 व हमसा आदि को खेती के लिए चुनाव करे।
- कार्बोसल्फान (0.1 प्रतिशत) के घोल में 12 घंटे तक बीज भिगोकर, बीजोपचार करना चाहिए।
- कार्बोफ्युरॉन 1 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से दो बार बराबर मात्रा में 15 और 45 दिन के अंतराल पर पौध रोपाई के बाद खेत को उपचारित करना चाहिए।

गेहूँ में सूत्रकृमि रोग व प्रबंधन

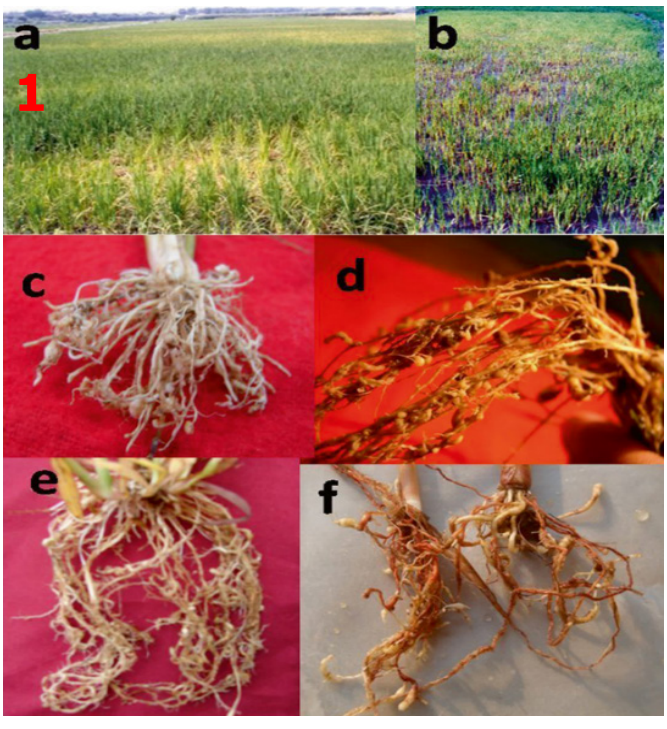
भारत में गेहूँ एक प्रमुख रबी फसल और मुख्य खाद्यान्न है, जो उत्तर और उत्तर-पश्चिमी भारत का मुख्य भोजन है। चीन के बाद भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इसकी खेती मुख्य रूप से पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान राज्य में की जाती है। यह फसल 15-20°C तापमान और सिंचित अवस्था में सबसे अच्छी होती है। गेहूँ की फसल को सेंहूंयागैगला नामक रोग (*एंग्विना ट्रिटिसाई*) नामक सूत्रकृमि द्वारा होता है। रोग ग्रसित पौधे की पत्तियों में सिकुड़न व ऐंठन आ जाती है। पौधे का मिट्टी के समीप तने का निचला भाग फूल जाता है एवं पौधे में फुटाव, स्वस्थ पौधे की अपेक्षा ज्यादा होता है। पौधे में बाली बनने के समय सूत्रकृमि पुष्प में प्रवेश कर जाता है और यहीं पर अपने जीवन की अन्य अवस्थाओं को पूरी करता है। इस समय तक बाली के कुछ दाने भूरे, कठोर, गोलाकार, गैगले/पिटिकाओ में परिवर्तित हो जाते है। रोगयुक्त बालिया, छोटी व बिखरी हुई दिखाई पड़ती है। यह सूत्रकृमि पिटिका/गैगला में 30 वर्ष तक जीवित रह सकते हैं। इस रोग का फैलाव बीजों के द्वारा होता है। यह सूत्रकृमि 50 प्रतिशत तक उत्पादन को प्रभावित कर सकता है।

प्रबंधन

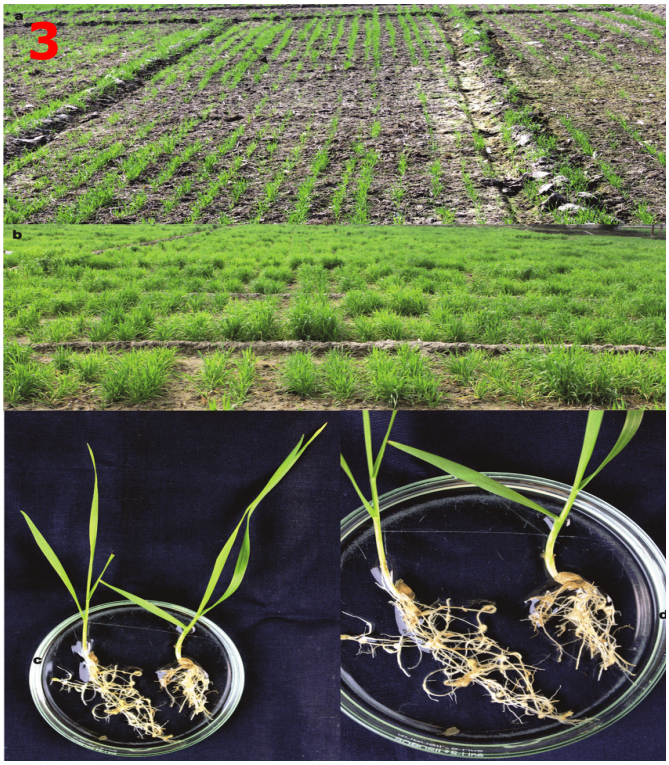
- गैगला को बीज में छलनी द्वारा, हाथ से चुनकर, हवा में सुखाकर या पानी में बीज भिगोकर, साफ़ करें।
- बीज को 5 प्रतिशत नमक व पानी के घोल में डालें तथा ऊपर तैरते गैगलो को अलग करके नष्ट कर दें और बचे हुए बीजों को साफ़ पानी में अच्छी तरह धोकर नमक निकाल दें। बीज को छायादार स्थान पर सुखा कर खेत में बुआई करें।



धान में रूट-नॉट सूत्रकृमि *मेलेडोगाइने ग्रेमिनीकाला* का प्रकोप। जड़ों में गांठें बनती हैं और पौधे बौने रह जाते हैं।









चित्र 1. धान की जड़ों में *मेलेडोगाइने ग्रेमिनीकाला* का प्रकोप। पौधे बौने एवं जड़ों में गांठें दिखाई देती हैं।

चित्र 2. धान में व्हाइट-टिप रोग, जो *अफेलेनेक्वाइड्स बेसेइ* से होता है। पत्तियों के सिरे सफेद और सूखे दिखते हैं।

चित्र 3. गेहूँ/जौ में रूट-नॉट सूत्रकृमि (*मेलेडोगाइने* स्प.) का प्रभाव। जड़ों में गांठें और पौधों में ठिगनापन दिखाई देता है।

चित्र 4. गेहूँ की जड़ों पर *हेटेरोडेरा अवेनी* का प्रकोप। जड़ें झाड़ीदार बन जाती हैं और सिस्ट दिखाई देते हैं।

तन्दुरोग

गेहूँ का तन्दु रोग (*एंग्विना ट्रिटिसाई तथा कोरनी वेक्टीरियम ट्रिटिसाई)*नामक जीवाणु द्वारा होता है। गेहूँ की बालिया ओस भरे ठंडे मौसम में तेन्दुरोग से पीली व पतली हो कर ऐंठी और चिपक कर कड़ी हो जाती है। रोगी पौधे कमजोर व सीधे खड़े न होकर जमीन के सहारे फैलते हैं। पौधे पीले पड़कर बौने रह जाते है और बालियों व पत्तियों से गोंद के समान चिपचिपा पीले रंग का तरल पदार्थ निकलता है। इसी पीले पदार्थ से बाली चिपक जाती है, सूंखकर भूरी व कड़ी हो जाती है और बालियों में बीज नहीं बन पाते है। इस रोग का फैलाव गेहूँ की बीज द्वारा मिलकर होता है।

प्रबंधन

इसका प्रबंधन गैगला रोग के प्रबंधन हेतु अपनाई गयी तकनीकियों को अपनाकर किया जा सकता है।

मोल्या रोग

गेहूँ में (*हेटेरोडेरा अवेनी*) सूत्रकृमि द्वारा होता है: मोल्या रोग मुख्यतः राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं जम्मू व कश्मीर के क्षेत्रों में अंकित किया गया है। फसल में इस रोग के आने से पौधे भिन्न-भिन्न समूहों में कही पर छोटे पीले रंग के व कहीं पर बड़े दिखाई देते हैं। पौधों में अंकुरण कम होता है तथा पौधे पीले व बौने रह जाते हैं। रोगी पौधों में बालियाँ अगेती व छोटी आती है जिससे दाने पतले व कम बनते है। रोगी पौधों की जड़ें पतली, छोटी व गुच्छेदार हो जाती है। यह रोग उपज में 30 प्रतिशत तक कमी कर सकते है।

प्रबंधन

- खेत की मई-जून के महीने में 10-15 दिन के अंतराल पर 2-3 दिन बार गहरी जुताई करें।
- रबी के मौसम में 1-2 साल तक फसल चक्र अपनाते हुए चना, सरसों, मटर, अलसी, सौंफ व गाजर की फसल उगायें।
- खाद को समय पर उचित मात्रा में डालें जिससे पौधे स्वस्थ रहे तथा उनमे रोग के प्रति सहिष्णु शक्ति बढ़ेगी।
- रोग अवरोधक प्रजातियाँ - राज 2184 व एमआर 1 को उगाकर सूत्रकृमि की हानि को कम कर सकते हैं।
- इस रोग के रोकथाम के लिए कार्बोफ्यूरॉन 1 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से बुआई के समय उपचारित करे तथा हल्की सिंचाई करे।
- अगेती या पछेती बुआई करके फसल की सूत्रकृमि हानि कम कर सकते हैं।

निष्कर्ष

उपरोक्त उल्लेखित सूत्रकृमियों द्वारा धान और गेहूँ की दोनों फसलों में होने वाली हानि से बचा जा सकता हैं। यदि हम समय पर उनका उचित नियन्त्रण विधियाँ अपनाकर उनका प्रबन्धन कर दें। जिससे न सिर्फ फसल को सुरक्षित किया जा सकता हैं, बल्कि उपज भी बढाई जा सकती हैं। जब उपज बढ़ेगी तब निश्चित ही किसान की आय भी बढ़ेगी, जिससे कृषक खुशहाल होगा।

आधुनिक बागवानी में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) टूल्स की उपयोगिता

संजय सिरोही, एन. वी. सिंह, डी. पी. सिंह एवं विजय सिंह जाटव
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

बागवानी फसलें पोषण, औषधीय गुणों, एंटीऑक्सीडेंट और लाभकारी प्राकृतिक तत्वों (Metabolites) से भरपूर होती हैं। ये सेहत के लिए बेहद फायदेमंद हैं और साथ ही अच्छा मुनाफा भी देती हैं। निर्यात की अपार संभावनाएं, विभिन्न जलवायु में उगने की क्षमता और आधुनिक तकनीकों को अपनाने की अनुकूलनशीलता के कारण बागवानी फसलों की घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भारी मांग है। बागवानी में मुख्य रूप से फलों, सब्जियों, फूलों, सुगंधित और औषधीय पौधों की खेती शामिल है। इसके अलावा, मसाले और बागान फसलें भी इसका अहम हिस्सा हैं। बागवानी फसलों ने कृषि सकल मूल्य वर्धन (GVA) में लगभग 33% का योगदान करता है।

भारत फल और सब्जी उत्पादन में विश्व में दूसरे स्थान पर है और आम, केला, अमरूद, अनार, खट्टा नींबू, पपीता, चीकू और आंवला जैसे कई फलों के उत्पादन में वैश्विक अग्रणी है। इसके अलावा, मटर, भिंडी, मसाले, नारियल और काजू उत्पादन में भी भारत की महत्वपूर्ण भागीदारी है। हाल के वर्षों में, कीवी, ड्रैगन फल, किन्नू, खजूर और पाम आयल जैसी फसलों की व्यावसायिक खेती से बागवानी फसलों में और अधिक विविधता आई है।

भारत में बागवानी क्षेत्र देश के कुल कृषि निर्यात में लगभग 37% का योगदान देता है, और बीते वर्षों में इसके निर्यात में लगातार वृद्धि दर्ज की गई है। वर्ष 2024–25 में भारत ने ताजे और प्रसंस्कृत फल, सब्जियां, मसाले, ग्वार गम और अन्य बागवानी फसलों सहित लगभग 85,000 करोड़ रुपये से अधिक मूल्य के बागवानी उत्पादों का निर्यात किया। ताजे फल और सब्जियों से लगभग 1.82 बिलियन अमेरिकी डॉलर की विदेशी मुद्रा अर्जित हुई।

भारत अंगूर, केला, संतरा और अनार जैसे फलों का प्रमुख निर्यातक है, जो नीदरलैंड, ईरान, बांग्लादेश, सऊदी अरब, ओमान, श्रीलंका और यूएई जैसे देशों को बड़ी मात्रा में निर्यात किए जाते हैं।

वर्ष 2024–25 में देश में लगभग 29.49 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में बागवानी फसलों की खेती की गई, जिससे करीब 369.05 मिलियन टन का उत्पादन प्राप्त हुआ, पिछले ढाई दशकों में देश को इंद्रधनुष (Rainbow) क्रांति का व्यापक लाभ मिला है, जिसके परिणामस्वरूप बागवानी उत्पादन में 67% से अधिक की वृद्धि हुई है। वर्ष 2011–12 में जहाँ बागवानी उत्पादन ने खाद्यान्न उत्पादन को पीछे छोड़ दिया था, वहीं 2013–14 से 2024–25 के बीच इसमें लगभग 30–31 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। इसी अवधि में बागवानी उत्पादों के निर्यात मूल्य में भी लगभग 70–90 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी हुई है।

अब बागवानी में रूफटॉप गार्डनिंग, बालकनी गार्डनिंग, कंटेनर गार्डनिंग, हाई-टेक खेती, संरक्षित खेती, डिजिटल बागवानी, जलवायु के अनुकूल खेती, हाइड्रोपोनिक्स, एरोपोनिक्स और रूटस्टॉक ब्रीडिंग जैसी नई विधियां अपनाई जा रही हैं। ये तकनीकें फसलों की पैदावार बढ़ा रही हैं और पर्यावरण को भी संतुलित रखने में मदद कर रही हैं।

प्रिसीजन हॉर्टिकल्चर आधुनिक तकनीकों जैसे कि सेंसर, जीपीएस और डेटा एनालिटिक्स का उपयोग करके सिंचाई, उर्वरक प्रबंधन और कीट नियंत्रण जैसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं को कुशलता से संचालित करती है। प्रिसीजन बागवानी कृषि में विकास का एक प्रभावी समाधान है, जो सही स्थान पर, सही मात्रा में और सही समय पर संसाधनों के सही उपयोग पर केंद्रित होता है। प्रिसीजन हॉर्टिकल्चर फसल उत्पादन में वृद्धि करने के साथ-साथ संसाधनों के कुशल प्रबंधन को सुनिश्चित करता है तथा पर्यावरणीय प्रभाव को न्यूनतम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

बागवानी क्षेत्र में सरकारी योजनाएं

पोषण सुरक्षा के अलावा बागवानी क्षेत्र ग्रामीण रोजगार को बढ़ावा देने, निर्यात अवसरों को सुदृढ़ करने, कृषि उद्यमिता को समर्थन देने, संसाधनों के प्रभावी प्रबंधन को सुनिश्चित करने, कृषि गतिविधियों में विविधता लाने और किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन विशेषताओं के मद्देनजर, सरकार ने इस क्षेत्र को सशक्त बनाने के लिए विभिन्न योजनाओं की शुरुआत की है:-

- राष्ट्रीय बागवानी मिशन (NHM)
- एकीकृत बागवानी विकास मिशन (MIDH)
- क्लस्टर विकास कार्यक्रम
- भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS) आधारित समन्वित बागवानी मूल्यांकन और प्रबंधन (CHAMAN)
- बागवानी क्षेत्र उत्पादन सूचना प्रणाली (HAPIS)
- HORTSAP और ODOP पहल

- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMFBY) का बागवानी फसलों पर विस्तार
- पीएम-किसान योजना
- डिजिटल कृषि मिशन (Digital Agriculture Mission)
- स्वच्छ पौध कार्यक्रम (Clean Plant Programme)

डिजिटल कृषि मिशन (Digital Agriculture Mission)

भारत सरकार ने 2 सितंबर 2024 को "डिजिटल कृषि मिशन" की शुरुआत की, जिसके लिए 2,817 करोड़ रुपये का बजट निर्धारित किया गया है। इस मिशन का उद्देश्य भारत की डिजिटल क्रांति का लाभ कृषि और बागवानी क्षेत्र तक पहुंचाना है।

इस मिशन के अंतर्गत तीन प्रमुख डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर विकसित किए जाएंगे:

1. एग्रीस्टैक (Agri Stack)
2. कृषि निर्णय समर्थन प्रणाली (Krishi Decision Support System - DSS)
3. मृदा प्रोफाइल मैपिंग (Soil Profile Mapping)

इस पहल के तहत, किसानों, फसलों, मिट्टी और मौसम से जुड़ा डेटा एकीकृत डिजिटल प्लेटफॉर्म पर जोड़ा जाएगा। सूचना और संचार तकनीक (ICT) तथा डेटा विज्ञान का उपयोग करके, खेती को अधिक लाभदायक और आधुनिक बनाया जा सकता है। यह पहल खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने, किसानों की आमदनी बढ़ाने और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों का समाधान निकालने में सहायक होगी। इसके अलावा, यह पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में भी मदद करेगी। डिजिटल तकनीक के माध्यम से किसानों को सही समय पर सटीक जानकारी प्राप्त होगी, जिससे वे बेहतर निर्णय लेकर अपनी फसलों की उत्पादकता बढ़ा सकेंगे।

प्रिसीजन बागवानी में डिजिटल उपकरणों का उपयोग

प्रिसीजन बागवानी में इंटरनेट ऑफ थिंग्स (Internet of Things -IoT), कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence - AI), रोबोटिक्स (Robotics), डिजिटल ट्विन्स (Digital Twins), ड्रोन / मानव रहित हवाई वाहन (Drone /Unmanned Aerial Vehicles - UAVs) रिमोट सेंसिंग (Remote Sensing) और इमेज विश्लेषण (Hyper spectralImaging) जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके फसल प्रबंधन, त्वरित निर्णय लेने और संसाधनों के कुशल प्रबंधन को संभव बनाया जा सकता है। इससे बागवानी फसलों का उत्पादन बढ़ेगा और टिकाऊ कृषि (Sustainable Agriculture) विकास को बढ़ावा मिलेगा। ये उपकरण फसल प्रबंधन और संसाधन अनुकूलन में उचित निर्णय लेने की प्रक्रिया को सक्षम बनाते हैं और फसल फेनोटाइपिंग व स्पीड ब्रीडिंग में भी मदद करते हैं। इन डिजिटल उपकरणों के माध्यम से कृषि उत्पादन में वृद्धि, लागत में कमी, पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आय में सुधार सुनिश्चित किया जा सकता है।

नर्सरी प्रबंधन के लिए डिजिटल उपकरण

स्वच्छ पौध कार्यक्रम (Clean Plant Programme) के साथ, उच्च गुणवत्ता वाली पौध सामग्री विशेष रूप से फलों की फसलों के लिए बागवानी उत्पादन प्रणाली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। बीज और पौध उत्पादन में डिजिटलाइजेशन के माध्यम से फील्ड वर्कर अपने डेटा को Management Information System (MIS) में दर्ज कर सकते हैं, जिससे प्रबंधन को ब्रीडर्स की गतिविधियों की निगरानी करने में सहायता मिलती है। स्मार्ट लॉगर्स (Smart loggers) पौधों की वृद्धि को ट्रैक करने, फसल स्वास्थ्य समस्याओं का पता लगाने और फसल के तनाव की पहचान करने में मदद कर सकते हैं। ये लॉगर्स मैनेजमेंट के लिए फील्ड वर्कर्स के स्थान की निगरानी करने के लिए भी अनुकूलित किए जा सकते हैं।

आज किसानों के सामने एक बड़ी चुनौती नकली बीज और पौध सामग्री की है। ट्रेसबिलिटी (Traceability) इसका समाधान प्रदान करती है, जिससे बीज और पौधों की उत्पत्ति का पता लगाया जा सकता है और प्रमाणन मानकों को पूरा न करने वाले बीजों और पौधों को हटाया जा सकता है। बीज पैकेटों पर लगे क्यूआर कोड (QR Code) और आर.एफ.आई.डी (RFID) को स्कैन करके, किसान बीजों के पूरे इतिहास की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और उनकी प्रामाणिकता सुनिश्चित कर सकते हैं। बीज उत्पादक और आपूर्तिकर्ता इस डिजिटल ट्रेसबिलिटी प्रणाली के माध्यम से बीज वितरण और बिक्री प्रबंधन को सुव्यवस्थित कर सकते हैं। किसानों के अनुकूल मोबाइल एप्लिकेशन भी समय पर कृषि कार्यों और सूचित निर्णय लेने में सहायता प्रदान करते हैं।

बागवानी में कई फसलें बहुवर्षीय होती हैं, जिसके कारण फसल सुधार में लंबा समय लगता है। कंप्यूटेशन और सिंथेटिक बायोलॉजी (Computation and Synthetic Biology) का समन्वय, हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग (Hyperspectral Imaging), कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ArtificialIntelligence), सेंसर (Sensors) तथा इमेज विश्लेषण (Image Analysis) जैसी तकनीकों के उपयोग से फिनोटाइपिंग और स्क्रीनिंग को तेज और प्रभावी बनाया जा सकता है।

हाई-थ्रूपुट फीनोटाइपिंग (High-throughput Phenotyping) में उन्नत सेंसर जैसे स्टीरियो कैमरा (Stereo Vision Cameras), लेजर स्कैनिंग (Laser Scanning), हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग (Hyperspectral Imaging), रिमोट सेंसिंग (Remote Sensing), लिडार (LiDAR), एक्स-रे सीटी (X-ray CT) और एमआरआई (MRI) का उपयोग करके फसलों से जुड़ा डेटा तेजी और सही तरीके से इकट्ठा किया जाता है।

इसी तरह, स्मार्ट ब्रीडिंग में इंटीग्रेटेड जीनोमिक-एन्वाइरोमिक

प्रेडिक्शन (iGEP) तकनीक पौधे के जीन (Genotype), उसके गुण (Phenotype) और पर्यावरण की जानकारी को मिलाकर यह बताती है कि पौधा कैसे बढ़ेगा। इससे जलवायु बदलाव के अनुसार बेहतर, ज्यादा उत्पादन देने वाली और रोग-प्रतिरोधी किस्में विकसित करने में मदद मिलती है।

फसल प्रबंधन के लिए डिजिटल टूल्स

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) और डिजिटल द्विन तकनीक ग्रीनहाउस वातावरण में वास्तविक समय की निगरानी, स्वचालन और रिमोट कंट्रोल की सुविधा प्रदान करती हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), सेंसर, यूएवी (UAVs), उन्नत हाइब्रिड कॉन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (CNN) और हनी बैजर ऑप्टिमाइजेशन एल्गोरिदम (HBOA) का उपयोग कीट और रोगों के प्रकोप की भविष्यवाणी, पहचान और फसल स्वास्थ्य विश्लेषण में किया जाता है।

ड्रोन, जो हाइपर स्पेक्ट्रल या मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग सिस्टम से लैस होते हैं, अजैविक तनाव के लक्षणों के प्रकट होने से पहले ही पौधों की परावर्तन विशेषताओं (spectral signatures) का विश्लेषण करके उनकी पहचान कर सकते हैं। इससे समय पर उपचारात्मक उपाय करने में मदद मिलेगी और खर्च और नुकसान को कम किया जा सकेगा।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), सेंसर, मशीन लर्निंग और रोबोटिक्स फसलों की कटाई के लिए उपयुक्त समय का निर्धारण, यांत्रिक कटाई में सहायता और सटीक सिंचाई प्रणालियों (Precision Irrigation Systems) में सहयोग करते हैं। सेंसर-आधारित स्मार्ट सिंचाई प्रणालियां, जो स्वचालित होती हैं, महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात जैसे राज्यों में अंगूर, केला, अनार और टमाटर जैसी फसलों में जल उपयोग दक्षता बढ़ाने और प्रति बूंद अधिक फसल उत्पादन में मदद कर रही हैं।

मौसम संबंधी अनुप्रयोग जैसे Skymet® और AccuWeather® स्थानीय मौसम पूर्वानुमान प्रदान करते हैं, जिससे किसान सिंचाई, कीट प्रबंधन और फसल कटाई के बारे में समय पर निर्णय ले सकते हैं। GIS, रिमोट सेंसिंग, UAVs, ड्रोन और हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग तकनीक का उपयोग फसलों के क्षेत्र के सटीक अनुमान और विभिन्न बागवानी फसलों के लिए उपयुक्त मिट्टी के मानचित्रण के लिए किया जा सकता है। ब्लॉकचेन तकनीक (Block chain Technology) का उपयोग कृषि बीमा और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन में किया जाता है, जिससे पारदर्शिता और ट्रेसबिलिटी सुनिश्चित होती है। फार्म मैनेजमेंट सिस्टम के सॉफ्टवेयर किसानों को अपनी फसलों की योजना बनाने, निगरानी करने और सभी कृषि गतिविधियों का विश्लेषण करने में मदद करते हैं। सॉफ्टवेयर से इनपुट, श्रम, उपज और वित्तीय पहलुओं को ट्रैक कर सकते हैं, जिससे बेहतर निर्णय लेने में सहायता मिलती है।

मोबाइल एप्लिकेशन जैसे 'Solapur-Anar' किसानों को फसल प्रबंधन में सहायता प्रदान करते हैं।

कटाई के बाद प्रबंधन और विपणन के लिए डिजिटल टूल्स

डिजिटल समाधान फसल कटाई के बाद भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये तकनीकें ट्रेसबिलिटी, ई-कॉमर्स को बढ़ावा देने और भंडारण व वितरण को बेहतर बनाने में मदद करती हैं।

अनाज और फलों की गुणवत्ता जांचने के लिए आधुनिक तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, कन्वोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (CNN) और LSTM आधारित डीप लर्निंग मॉडल का उपयोग अनार के रंग, फल की सतह पर दाग और आकार के आधार पर ग्रेडिंग और छंटाई करने के लिए किया जाता है। आज बाजार में AI-आधारित अनार ग्रेडिंग और सॉर्टिंग मशीनें (जैसे Elisam® ग्रेडिंग मशीन, जो Ellips तकनीक द्वारा संचालित) उपलब्ध हैं, जो फलों को तेजी और सटीकता से वर्गीकृत कर सकती हैं।

हालांकि, उच्च लागत, सीमित पहुंच और डेटा सुरक्षा संबंधी चिंताएं इन तकनीकों के व्यापक उपयोग में बाधा बन सकती हैं। फिर भी, डिजिटल नई तकनीक से बागवानी को आधुनिक और प्रभावी बनाने की अपार संभावनाएं हैं। ये तकनीकें उत्पादकता, स्थिरता और जलवायु अनुकूलन को बढ़ावा देकर वैश्विक खाद्य सुरक्षा चुनौतियों का समाधान करने में मदद कर सकती हैं।

डिजिटल तकनीक की मदद से किसान बेहतर गुणवत्ता वाले उत्पाद बाजार में बेच सकेंगे, जिससे उनकी आय में वृद्धि होगी और उपभोक्ताओं को उच्च गुणवत्ता वाला ताजा माल मिलेगा। ये डिजिटल टूल्स भारत सहित पूरे विश्व में बागवानी क्षेत्र को नया आकार देने में सहायक साबित हो सकते है।

बागवानी निर्यात में डिजिटल टूल्स

डिजिटल उपकरण बागवानी निर्यात (Horticultural Export) को अधिक कुशल, पारदर्शी (Transparency) और बाज़ार तक बेहतर पहुंच बनाने में सहायता कर रहे हैं। ब्लॉकचेन तकनीक (Blockchain Technology) आपूर्ति श्रृंखला (Supply Chain) में ट्रेसबिलिटी (Traceability) और प्रामाणिकता (Authenticity) सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिससे निर्यातकों को अंतरराष्ट्रीय मानकों (International Standards) को पूरा करने और धोखाधड़ी को कम करने में मदद मिलती है।

IoT सेंसर के माध्यम से निर्यातक वास्तविक समय (Real-Time) में भंडारण परिस्थितियों की निगरानी कर सकते हैं, जिससे फलों और सब्जियों जैसे तापमान-संवेदनशील (Temperature-Sensitive) उत्पादों की गुणवत्ता परिवहन के दौरान बनी रहती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) और डेटा एनालिटिक्स (Data Analytics) निर्यातकों को बाज़ार की मांग का पूर्वानुमान (Market Demand Prediction), मूल्य निर्धारण रणनीतियों

का अनुकूलन (Pricing Optimization) और लॉजिस्टिक्स (Logistics) को सुव्यवस्थित करने में सक्षम बनाते हैं।

आज के आधुनिक समय में स्वचालित लॉजिस्टिक्स (Automated Logistics) और स्मार्ट वेयरहाउस (Smart Warehouses) तेजी से लोकप्रिय हो रहे हैं। ये उन्नत तकनीकें रोबोटिक्स (Robotics) और AI-संचालित प्रबंधन प्रणाली (AI-Powered Management System) का उपयोग करके भंडारण और वितरण प्रक्रियाओं को अधिक प्रभावी बनाती हैं।

इन तकनीकों की मदद से सामग्री के संचालन में लगने वाला समय कम हो जाता है और गलतियों की संभावना भी बहुत कम हो जाती है। स्मार्ट वेयरहाउस में (AI) स्वचालित मशीनें यह तय करते हैं कि कौन-सा सामान कहां रखा जाए और कब भेजा जाए, जिससे पूरी प्रक्रिया तेज़ और सुचारू हो जाती है।

स्वचालित लॉजिस्टिक्स का मुख्य लाभ यह है कि यह श्रम लागत को कम करता है, उत्पादों की ट्रैकिंग को आसान बनाता है और आपूर्ति श्रृंखला (Supply Chain) को अधिक कुशल बनाता है। इससे व्यापारियों और उपभोक्ताओं दोनों को लाभ होता है, क्योंकि सामान समय पर और सही स्थिति में पहुंचता है।

डिजिटल व्यापार प्लेटफॉर्म (Digital Trade Platforms) और क्लाउड-आधारित समाधान (Cloud-Based Solutions) व्यापार प्रक्रियाओं को आसान और तेज़ बना रहे हैं। ये तकनीकें दस्तावेज़ीकरण को डिजिटल रूप में बदलकर कागजी कार्यवाही को कम करती हैं, जिससे व्यापार अधिक सुचारू रूप से चल सकता है। इन तकनीकों की मदद से इलेक्ट्रॉनिक फाइटोसैनिटरी प्रमाणपत्र (Electronic Phytosanitary Certificates) आसानी से जारी किए जा सकते हैं, जो निर्यात और आयात प्रक्रिया को सरल बनाते हैं। इसके अलावा, शिपमेंट (Shipment) की वास्तविक समय में ट्रैकिंग (Real-Time Tracking) भी संभव होती है, जिससे व्यापारियों को अपने माल की सही स्थिति का पता चलता रहता है।

कृषि में शिक्षा और प्रशिक्षण

डिजिटल तकनीक से किसान ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म पर खेती, कीट प्रबंधन और बाजार की जानकारी (Market Trends) प्राप्त कर सकते हैं। कम्युनिटी फोरम (Community Forums) अनार उत्पादकों को अनुभव और समाधान साझा करने का अवसर देते हैं, जिससे वे बेहतर कृषि तकनीक अपनाकर टिकाऊ खेती और फसल की गुणवत्ता सुधार सकते हैं।

जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव, बागवानी फसलों की बारहमासी प्रकृति और ऊंची प्रारंभिक लागत को देखते हुए, डिजिटलीकरण और आधुनिक तकनीकों के माध्यम से प्रिसिजन बागवानी (Precision Horticulture) का विस्तार आवश्यक है। डिजिटलकरण और अन्य नवीन उपकरणों के माध्यम से इसे अपनाकर, निरंतर लाभप्रदता, संसाधनों की उच्च दक्षता और पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव सुनिश्चित किया जा सकता है। डिजिटल तकनीक से प्रिसिजन बागवानी, बागवानी क्षेत्र को नई ऊंचाइयों तक ले जाने की क्षमता रखती है। यह जलवायु-सहिष्णु, किफायती, संसाधन-सक्षम और अवशेष-मुक्त (Residue-Free) बागवानी उत्पादों को बढ़ावा देकर व्यापक मांग उत्पन्न कर सकती है। आधुनिक तकनीकों का समन्वित उपयोग पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होगा और किसानों की आय बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

फूलों में मूल्य संवर्धन द्वारा आय सृजन एवं रोजगार

बबीता सिंह, रितु जैन, अजय तिवारी एवं अपूर्वा शर्मा
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फूलों तथा कृषि-बागवानी अपशिष्टों में मूल्य संवर्धन आय सृजन और रोजगार के नए अवसर प्रदान करने का एक प्रभावी माध्यम है। स्थानीय संसाधनों की पहचान, बाजार की मांग को समझना तथा फूल आधारित उद्यमों की स्थापना मूल्य संवर्धन की सफलता के लिए आवश्यक है। प्रशिक्षण, जनजागरूकता, संवाद और डिजिटल माध्यमों के माध्यम से लोगों को कौशल प्रदान कर उन्हें उद्यमिता की ओर प्रेरित किया जा सकता है। फूलों के अपशिष्ट तथा कृषि अवशेषों का पुनर्चक्रण और पुनः उपयोग करके विभिन्न सजावटी एवं उपयोगी उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जिससे अपशिष्ट प्रबंधन की समस्या कम होती है तथा उत्पादकों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। यह प्रक्रिया विशेष रूप से महिलाओं, बेरोजगार युवाओं और वंचित समुदायों को आत्मनिर्भर बनाने में सहायक सिद्ध होती है।इस प्रकार फूलों और कृषि अवशेषों में मूल्य संवर्धन न केवल पर्यावरण संरक्षण और संसाधनों के सतत् उपयोग को बढ़ावा देता है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाते हुए सामाजिक-आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

मूल्य संवर्धन तभी सफल हो सकता है जब उत्पादक स्थानीय संसाधनों का उपयोग करने वाले उत्पादों की सावधानीपूर्वक पहचान करें, बाजार में मौजूद कमी को समझें और फूलों पर आधारित (फ्लोरीकल्चर) उद्यम की स्थापना करें। मूल्य संवर्धित उत्पादों को बढ़ावा देने के लिए लोगों में जागरूकता फैलाना तथा उन्हें कौशल प्रदान करना आवश्यक है, जो प्रशिक्षण, आपसी संवाद या इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से ऑनलाइन प्रशिक्षण आदि द्वारा किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्य संवर्धन महिलाओं, बेरोज़गार युवाओं, स्कूल छोड़ चुके बच्चों, शौक़ीनों और उत्साही लोगों को आजीविका कमाने में सहायता कर सकता है तथा उन्हें उद्यमी बनाकर उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार ला सकता है। मूल्य संवर्धन रोजगार के अवसर पैदा करता है और संसाधनों के सतत् उपयोग को बढ़ावा देता है। इससे न केवल अर्थव्यवस्था के विकास में सहायता मिलती है, बल्कि विशेष रूप से महिलाओं और वंचित समुदायों को सशक्त भी बनाया जा सकता है। कृषि और बागवानी उत्पादों के उत्पादन में अक्सर बड़ी मात्रा में अपशिष्ट उत्पन्न होता है क्योंकि इन फसलों का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता। किंतु इस अपशिष्ट को पुनः उपयोग में लाकर सजावटी एवं उपयोगी वस्तुएँ बनाई जा सकती हैं, जिससे उत्पादकों को आय का नया स्रोत मिलता है और अपशिष्ट प्रबंधन की समस्या भी कम होती है। फूलों के अपशिष्ट के निपटान से जुड़ी पर्यावरणीय समस्याएँ भी अपशिष्ट की मात्रा को बढ़ाती हैं। फूलों के अपशिष्ट और कृषि अवशेषों को पुनर्चक्रित एवं पुनः उपयोग करके अपशिष्ट की मात्रा कम की जा सकती है और उत्पादकों के लिए नए आर्थिक अवसर सृजित किए जा सकते हैं। कृषि अवशेष जैसे बाजरा के सूखे बाल, गेहूँ व जौ की ऐंठें तथा मक्का की छिलकेदार पत्तियाँ फसल उत्पादन के दौरान बड़ी मात्रा में उत्पन्न होती हैं। इन्हें विभिन्न तरीकों से पुनः प्रसंस्कृत कर सजावटी वस्तुएँ और अन्य मूल्य संवर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं। कृषि एवं बागवानी अपशिष्ट का उपयोग कर उत्पादक अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं और अपशिष्ट की मात्रा भी घटा सकते हैं। यह दृष्टिकोण संसाधनों के अधिक टिकाऊ और कुशल उपयोग को बढ़ावा देता है तथा परिपत्र अर्थव्यवस्था के विकास में योगदान देता है। मूल्य संवर्धन से उत्पादकों को अधिक लाभ प्राप्त होता है, घरेलू और निर्यात बाज़ार के लिए बेहतर गुणवत्ता के उत्पाद उपलब्ध होते हैं और उपभोक्ताओं को ऐसे उत्पाद ख़रीदने के लिए प्रोत्साहन मिलता है। मूल्य संवर्धन के तीन मुख्य कारण हैं—

1. अतिरिक्त उत्पादन का उपयोग और अपशिष्ट का उन्मूलन
2. लाभ जोड़कर कृषि आय को स्थिर करना
3. रचनात्मकता के लिए अवसर प्रदान करना

मूल्य संवर्धन के विभिन्न रूप

1. ताज़े फूलों से बने उत्पाद

फूलों की सजावट: फूलों की सजावट केवल एक रचनात्मक शौक ही नहीं है, बल्कि यह एक लाभदायक व्यवसाय का रूप भी ले सकती है। ताज़े फूलों से आकर्षक गुलदस्ते और विभिन्न प्रकार की सजावट तैयार करना मूल्य संवर्धन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, जो वाणिज्यिक फूल उद्योग की सफलता में अहम भूमिका निभाता है।

कटे हुए फूलों के साथ विभिन्न प्रकार के फिलर्स (भराव सामग्री) का उपयोग करके उन्हें अलग-अलग शैलियों में सजाया जा सकता है, जिससे सुंदर, आकर्षक और अनोखे गुलदस्ते तैयार किए जा सकते हैं। ऐसे फूलों के गुलदस्ते और सजावट जन्मदिन, विवाह, वर्षगाँठ जैसे विशेष अवसरों पर बिक्री के लिए बहुत अधिक मांग में रहते हैं, साथ ही सामान्य उपहार देने के लिए भी इनका व्यापक उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त, फूलों की सजावट का उपयोग कार्यक्रमों, समारोहों, होटलों और रेस्तरां में टेबल सेंट्रल पीस के रूप में भी किया जा सकता है, जो स्थान की सुंदरता और आकर्षण को बढ़ाता है। उचित प्रशिक्षण, रचनात्मक सोच और सजावटी कौशल के माध्यम से फूलों की सजावट को एक सफल और आय उत्पन्न करने वाला व्यवसाय बनाया जा सकता है। यह

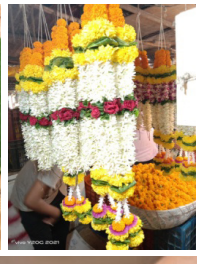
गतिविधि किसानों, महिलाओं, युवाओं और उद्यमिता में रुचि रखने वाले लोगों के लिए रोजगार और अतिरिक्त आय का एक उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती है।

मालाएँ: सुगंधित फूलों और खुशबूदार पत्तियों से बनी मालाएँ भारतीय संस्कृति का सदियों से एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही हैं। इन मालाओं का उपयोग केवल सजावट के लिए ही नहीं किया जाता, बल्कि इनका धार्मिक एवं सामाजिक महत्व भी होता है। विभिन्न अवसरों और परंपराओं के अनुसार मालाएँ बनाने के लिए अलग-अलग प्रकार के फूलों और पत्तियों का उपयोग किया जाता है। चमेली, चंपा, कमल, लिली, गुलदाउदी, गुलाब और गुड़हल जैसे फूल आमतौर पर माला बनाने में प्रयोग किए जाते हैं। वर्तमान समय में ऑर्किड जैसे अधिक मूल्य वाले फूलों का भी मालाओं के निर्माण में उपयोग किया जाने लगा है। माला बनाने की कला को एक विशेष कौशल माना जाता है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती चली आ रही है।

गजरा/वेणी: गजरा महिलाओं के बालों की सजावट और दरवाज़ों आदि की सजावट के लिए उपयोग किया जाता है। यह मुख्यतः चमेली, क्रॉसैन्ड्रा और रजनीगंधा से बनाया जाता है।

पुष्पचक्र: पुष्पचक्रों का उपयोग प्रायः श्रद्धांजलि अर्पित करने अथवा सम्मान और आदर के प्रतीक के रूप में किया जाता है। इन्हें सामान्यतः फूलों, पत्तियों तथा कभी-कभी टहनियों से बनाया जाता है और गोलाकार रूप में सजाया जाता है। समाधि स्थलों पर स्मृति-चिह्न के रूप में उपयोग के अलावा, पुष्पचक्रों का प्रयोग घरों की सजावट, विभिन्न कार्यक्रमों, आयोजनों और विशेष अवसरों पर सजावटी वस्तु के रूप में भी किया जाता है।







बटनहोल: कोट बटनहोल एक छोटी और आकर्षक पुष्प सजावट होती है, जिसमें एक फूल या फूलों का छोटा गुच्छा शामिल होता है। इसे सामान्यतः कोट या जैकेट के बटनहोल में लगाया जाता है या कपड़े के ऊपरी हिस्से (लैपल) पर पिन की सहायता से लगाया जाता है। बटनहोल का उपयोग विशेष अवसरों जैसे विवाह समारोह, औपचारिक कार्यक्रमों, सांस्कृतिक आयोजनों और सम्मान समारोहों में किया जाता है। यह व्यक्ति की पोशाक की शोभा बढ़ाने के साथ-साथ उसकी सुरुचि, सम्मान और विशेष अवसर की महत्ता को भी दर्शाता है।

कॉर्सेज: कॉर्सेज एक सुंदर पुष्प आभूषण होता है, जिसमें एक फूल या फूलों की छोटी सजावट शामिल होती है और इसे व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत सजावट के रूप में पहना जाता है। इसका उपयोग सामान्यतः महिलाएँ विशेष अवसरों जैसे विवाह, वर्षगाँठ समारोह, स्वागत कार्यक्रम और अन्य महत्वपूर्ण आयोजनों में करती हैं।

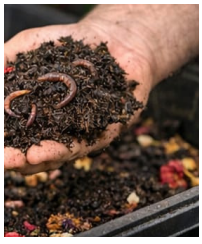
कॉर्सेज को छाती पर पिन की सहायता से लगाया जा सकता है या कलाई पर बाँधा जा सकता है। आकार और सजावट की दृष्टि से यह प्रायः बटनहोल की तुलना में बड़ा और अधिक आकर्षक होता है। यह न केवल पहनावे की सुंदरता बढ़ाता है, बल्कि विशेष अवसर की भव्यता और गरिमा को भी दर्शाता है।

फ्लोरल गिफ्ट्स: इंटरनेट के बढ़ते उपयोग और ई-कॉमर्स के विस्तार के साथ फूलों के व्यवसाय में भी एक बड़ा परिवर्तन देखने को मिला है। अब लोग अपने प्रियजनों के लिए फूलों के उपहार आसानी से ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं और उन्हें देश के किसी भी हिस्से में या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी भेज सकते हैं। आजकल अनेक फूल विक्रेता और ऑनलाइन फ्लावर डिलीवरी सेवाएँ विभिन्न प्रकार की फ्लोरल सजावट उपलब्ध कराती हैं, जिनमें साधारण गुलदस्तों से लेकर आकर्षक फूलों की टोकरियाँ तथा ग्राहक की पसंद के अनुसार तैयार किए गए विशेष डिज़ाइन भी शामिल हैं। ये फूल अलग-अलग उत्पादन केंद्रों से प्राप्त किए जाते हैं और बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए बड़े शहरों में सजावट तैयार कर भेजे जाते हैं। इस प्रकार फ्लोरल गिफ्ट्स न केवल भावनाओं को व्यक्त करने का माध्यम हैं, बल्कि फूल उद्योग के लिए आय और रोजगार के नए अवसर भी प्रदान करते हैं।

कम्पोस्ट / मृदा सुधारक: फूलों के अपशिष्ट का वर्मी-कम्पोस्टिंग में उपयोग करना जैव-परिवर्तन (Bioconversion) की एक प्रभावी और व्यवहारिक विधि है, जिससे मूल्य संवर्धित कम्पोस्ट प्राप्त होता है और ठोस अपशिष्ट प्रदूषण में कमी आती है। मंदिरों में प्रतिदिन बड़ी मात्रा में फूलों का अपशिष्ट उत्पन्न होता है, जिसे इस विधि द्वारा ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की एक प्रभावी रणनीति के रूप में सफलतापूर्वक अपनाया जा सकता है। वर्मी-कम्पोस्टिंग तकनीक के माध्यम से फूलों के अपशिष्ट को मूल्य संवर्धित कम्पोस्ट में परिवर्तित करने से न केवल मंदिरों में उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट की मात्रा में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है, बल्कि इससे अतिरिक्त आय का स्रोत भी विकसित किया जा सकता है। यह पद्धति सतत् और पर्यावरण-अनुकूल अपशिष्ट प्रबंधन का एक व्यवहारिक विकल्प प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त, फूलों के

अपशिष्ट से तैयार वर्मी-कम्पोस्ट में पाए जाने वाले जैविक तत्व तथा जैव-उर्वरकों में उपस्थित सूक्ष्मजीव रासायनिक उर्वरकों के विकल्प के रूप में कार्य कर सकते हैं। ये मृदा की उर्वरता में सुधार करते हैं तथा विभिन्न प्रकार की फसलों और पौधों की वृद्धि एवं उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते हैं।





2. प्रसंस्कृत फूल उत्पाद

प्रसंस्कृत फूल उत्पादों में फूलों को विभिन्न तकनीकों द्वारा संसाधित करके अनेक मूल्य संवर्धित वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। इनमें आवश्यक तेल (Essential Oils), एब्सोल्यूट (Absolutes), कंक्रीट (Concrete), पंखुड़ी जैम जैसे गुलाब और रोडोडेंड्रॉन का जैम, जैली, रेडी-टू-सर्व पेय पदार्थ, वाइन, फ्लोरल चाय, रोज़ हिप जूस, पोल्ट्री फ़ीड, कीट प्रतिकारक (Insect Repellent), प्राकृतिक पुष्प रंग (Floral Dyes), पंखुड़ियों से युक्त हस्तनिर्मित कागज़ तथा सौंदर्य प्रसाधन जैसे कैलेंडुला क्रीम, गुलाब जल, गुलाब क्रीम आदि शामिल हैं। ये सभी उत्पाद फूलों के मूल्य संवर्धन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जो न केवल किसानों और उद्यमियों के लिए अतिरिक्त आय के अवसर प्रदान करते हैं, बल्कि फूल उद्योग के विकास और संसाधनों के बेहतर उपयोग में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

एसेंशियल ऑयल/गंध तेल: गंध तेल विभिन्न प्रकार के सुगंधित फूलों जैसे गुलाब, चमेली, रजनीगंधा आदि की पंखुड़ियों से भाप आसवन विधि द्वारा निकाले जाते हैं। यद्यपि इन तेलों की कीमत अधिक होती है और आजकल कृत्रिम संश्लेषण द्वारा भी सुगंधित पदार्थ उपलब्ध हैं, फिर भी इत्र उद्योग में आवश्यक तेलों का उपयोग सबसे अधिक किया जाता है। गुलाब का तेल विशेष रूप से अरोमा थेरेपी तथा प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियों से जुड़े विशेषज्ञों द्वारा अत्यधिक पसंद किया जाता है। ऐतिहासिक रूप से भी इन तेलों का उपयोग सुगंध के रूप में तथा इत्रों के मुख्य घटक के रूप में किया जाता रहा है। ये आवश्यक तेल न केवल अपनी उत्कृष्ट खुशबू के लिए जाने जाते हैं, बल्कि इनके औषधीय गुणों के कारण भी इनका महत्व अत्यधिक है।

अगरबत्ती और धूप: मंदिरों से निकलने वाले फूलों के अपशिष्ट का पुनर्चक्रण और पुनः उपयोग करके अगरबत्ती या धूप कोन बनाना न केवल अपशिष्ट प्रबंधन का एक प्रभावी तरीका है, बल्कि यह लाभकारी व्यवसाय के लिए कच्चे माल का एक सतत् और विश्वसनीय स्रोत भी प्रदान करता है। फूलों की पंखुड़ियों और प्राकृतिक सुगंध जैसे प्राकृतिक पदार्थों के उपयोग से तैयार की गई अगरबत्तियाँ और धूप कोन पर्यावरण के अनुकूल होती हैं तथा उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य के लिए भी अपेक्षाकृत सुरक्षित मानी जाती हैं। इस प्रकार की उद्यमिता न केवल आय सृजन में सहायक होती है, बल्कि स्वच्छ और हरित वातावरण को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

एब्सोल्यूट: एब्सोल्यूट एक अत्यंत संकेंद्रित और पूरी तरह से अल्कोहल में घुलनशील तरल सुगंधित पदार्थ होता है। इसे सामान्यतः कंक्रीट का अल्कोहल निष्कर्षण या पौधों की वसा आधारित सामग्री से निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में मोम, टरपीन, सेसक्विटर्पीन और अधिकांश गंधहीन पदार्थों को हटा दिया जाता है, जिससे शुद्ध और प्रबल सुगंध वाला एब्सोल्यूट तैयार होता है। एब्सोल्यूट का उपयोग इत्र और अन्य सुगंधित उत्पादों में किया जाता है और यह इसकी उच्च गुणवत्ता और तीव्र सुगंध के लिए प्रसिद्ध है।

कंक्रीट: कंक्रीट आवश्यक तेल का एक अशुद्ध रूप होता है, जिसे अधिकांशतः सॉल्वेंट निष्कर्षण विधि से प्राप्त किया जाता है। इसमें आवश्यक तेल, पौधों के रंगद्रव्य और मोम शामिल रहते हैं। कंक्रीट से ही एब्सोल्यूट तैयार किया जाता है। वज़न के आधार पर, कंक्रीट से लगभग 45-50% तक एब्सोल्यूट प्राप्त किया जा सकता है। यह विधि सुगंध उद्योग में उच्च गुणवत्ता वाले इत्र और अन्य उत्पादों के निर्माण के लिए आधार प्रदान करती है।

गुलकंद (गुलाब की पंखुड़ी का जेम): गुलकंद आयुर्वेद में एक प्रसिद्ध और सामान्य टॉनिक है, जिसे निस्संदेह सबसे स्वादिष्ट आयुर्वेदिक तैयारी माना जाता है। यह प्राकृतिक रूप से कैल्शियम से समृद्ध होता है और इसमें एंटीऑक्सिडेंट गुण भी पाए जाते हैं, जिससे यह स्वास्थ्यवर्धक होता है। इसे सभी प्रकार की शारीरिक संरचना वाले लोग पूरे वर्ष उपयोग कर सकते हैं। गुलकंद बनाने के लिए गुलाब की पंखुड़ियों का उपयोग किया जाता है। चौड़े मुँह वाली कांच की जार में पंखुड़ियों और चीनी की परतें बारी-बारी से लगाई जाती हैं, जहाँ चीनी की मात्रा पंखुड़ियों के वजन की दोगुनी होती है। जार को बंद करके प्रतिदिन सुबह 10 बजे से शाम 4 बजे तक धूप में रखा जाता है। तीन से चार सप्ताह के बाद गुलकंद तैयार हो जाता है, हालांकि समय मौसम और धूप की उपलब्धता पर निर्भर करता है। गुलकंद की ताजगी और ठंडक बढ़ाने के लिए इसमें चांदी की परत या इलायची के बीज मिलाए जा सकते हैं। यह न केवल स्वाद में लाजवाब होता है, बल्कि स्वास्थ्यवर्धक गुणों से भी भरपूर होता है।

गुलाब जल: गुलाब जल बनाने की प्रक्रिया में गुलाब की पंखुड़ियों को पानी में उबालकर और भाप को संकुचित करके तैयार किया जाता है। गुलाब के फूल आमतौर पर मई के अंत में तोड़ने के लिए तैयार होते हैं, जून में उनकी अधिकतम फसल होती है और अक्टूबर तक फूल आते रहते हैं। इस समय ठंड और बारिश के कारण गुलाब सर्दियों की तैयारी में लग जाते हैं। फूलों को सुबह सबसे पहले तोड़ा जाता है और हाथ से तोड़ी गई फूलों की पूरी टोकरी को आसवन उपकरण में ले जाया जाता है। वहां फूलों की भाप आसवन प्रक्रिया तुरंत शुरू की जाती है, जिसमें फूलों को धीरे-धीरे उबालकर भाप

को संकुचित किया जाता है। इस प्रक्रिया में तेल ऊपर उठता है और अलग कर लिया जाता है। इस तरह से शुद्ध गुलाब जल और गुलाब का आवश्यक तेल तैयार किया जाता है, जिसका उपयोग सुगंध, सौंदर्य प्रसाधन और औषधीय उत्पादों में किया जाता है।

गुलरोबान/गुलरोगन: गुलरोबान या गुलरोगन तैयार करने की प्रक्रिया में गुलाब के फूलों को गर्म तिल के तेल के साथ मैसेरेशन किया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान गुलाब की पंखुड़ियों का उड़नशील तेल किसी अन्य वनस्पति तेल जैसे तिल का तेल, नारियल का तेल आदि में अवशोषित हो जाता है, और इस प्रकार उत्पाद तैयार होता है। गुलरोबान/गुलरोगन का उपयोग बालों के तेल के रूप में, अरोमा थेरेपी में, और शरीर की मालिश के लिए किया जाता है। यह उत्पाद प्राकृतिक और स्वास्थ्यवर्धक होने के साथ-साथ सुगंधित भी होता है और व्यक्तिगत देखभाल में लाभकारी माना जाता है।

शरबत गुलाब: शरबत गुलाब गुलाब की पंखुड़ियों से निकाले गए अर्क और उसमें चीनी मिलाकर तैयार किया जाता है। यह एक मीठा और सुगंधित पेय पदार्थ होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में इस गुलाब के सिरप का उपयोग गुलाब फ्लेवर वाले स्कोन, केक और मार्शमेलो जैसी मिठाइयाँ बनाने में किया जाता है। शरबत गुलाब न केवल स्वाद में आकर्षक होता है, बल्कि इसे ठंडा या गर्म दोनों तरह से वर्षभर आनंद लिया जा सकता है।

















रोज़ हिप्स: रोज़ हिप्स को कभी-कभी जेम, जैली और मर्मलेड में बदला जाता है, विशेष रूप से उनके उच्च विटामिन C सामग्री के कारण। इसके अलावा, रोज़ हिप्स को दबाकर और छानकर रोज़ हिप सिरप भी तैयार किया जाता है। रोज़ हिप्स से रोज़ हिप बीज का तेल भी निकाला जाता है, जिसका उपयोग त्वचा संबंधी उत्पादों और कुछ मेकअप उत्पादों में किया जाता है। यह प्राकृतिक तेल त्वचा को पोषण देने और उसे स्वस्थ बनाए रखने में सहायक होता है।

फ्लोरल चाय: साधारण काली चाय और हरी चाय के अलावा, फ्लोरल चाय भी तैयार की जाती है। यह चाय गुलाब की कलियाँ, गुलाब की पंखुड़ियाँ, रोज़ हिप्स, गुलदाउदी और गुड़हल जैसे फूलों से बनाई जाती है। रोज़ हिप्स (Rose Hips) से बनी चाय विटामिन C में समृद्ध होती है और यह पेट संबंधी समस्याओं, जैसे मूत्राशय में संक्रमण और दस्त में मदद कर सकती है। गुलदाउदी की चाय हल्की धूप से प्रभावित होने पर राहत देती है और गले की खराश कम करती है। चूंकि यह चाय कैफीन मुक्त होती है, इसलिए यह बच्चों के लिए गर्मियों में एक उत्कृष्ट पेय विकल्प है। गुड़हल की चाय भी विटामिन C से भरपूर होती है और इसका गहरा लाल रंग व स्वाद लेमोनेड जैसा ताज़गी भरा होता है।

पोल्ट्री फ़ीड: गेंदा में कारोटिनॉइड्स और ज़ैंथोफिल्स की उच्च मात्रा पाई जाती है। सूखी हुई गेन्दे की पंखुड़ियाँ पोल्ट्री फ़ीड में मिलाई जाती हैं, जिससे अंडे की जर्दी का रंग गहरा और अधिक स्वीकार्य बनता है। इसके अलावा, यह खाद्य पदार्थ में मूल्य संवर्धन भी प्रदान करती हैं। इस प्रकार फूलों का उपयोग न केवल स्वास्थ्यवर्धक पेय पदार्थ बनाने में किया जाता है, बल्कि कृषि और पोल्ट्री उद्योग में भी मूल्य संवर्धन और आय सृजन के अवसर प्रदान करता है।

फार्मास्यूटिकल और न्यूट्रास्यूटिकल यौगिक: कुछ फूलों की फसलें दवा निर्माण के लिए महत्वपूर्ण यौगिकों का समृद्ध स्रोत होती हैं। उदाहरण के लिए, कैथरंथस रोज़ियस से कैथरन्थिन और विंक्रिस्टीन जैसे यौगिक प्राप्त होते हैं, जिनका उपयोग कैंसर के इलाज में किया जाता है। इसी प्रकार, गुलाब के फलों से विटामिन C निकाला जाता है, जिसे रोज़ हिप विटामिन C के रूप में बाज़ार में बेचा जाता है और स्कर्वी जैसी बीमारियों के इलाज तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। भारत में ऐसे पौधों की खेती और इन यौगिकों के निष्कर्षण के लिए अत्यधिक संभावनाएँ हैं। मानव शरीर कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों जैसे ल्यूटिन का निर्माण स्वयं नहीं कर सकता, जो नेत्र संबंधी बीमारियों, विशेषकर अंधापन, के उपचार में सहायक होते हैं। ल्यूटिन की कमी रेटिना को आवश्यक पोषण नहीं प्रदान करती, जिससे दृष्टि दोष और अंधापन हो सकता है। गेंदा और कैलेंडुला फूल ल्यूटिन के सबसे समृद्ध स्रोत माने जाते हैं। दक्षिण भारत में गेंदा का वाणिज्यिक रूप से बड़े पैमाने पर अनुबंध खेती के माध्यम से उत्पादन किया जाता है, उदाहरण के लिए तामिलनाडु में ई.आई.डी. पैरी लिमिटेड और केरला में ए.वी.टी. मैककॉमिक लिमिटेड जैसी कंपनियाँ। इन फूलों से निकाले गए रंगद्रव्य को पोल्ट्री फ़ीड में मिलाया जाता है, जिससे अंडे की जर्दी और मुर्गी के मांस का रंग गहरा पीला बनता है। इसके अलावा, ये प्राकृतिक रंग खाद्य उद्योग में भी उपयोग किए जाते हैं। इस प्रकार, फूलों के ये फार्मास्यूटिकल और न्यूट्रास्यूटिकल यौगिक न केवल

स्वास्थ्य और पोषण के लिए महत्वपूर्ण हैं, बल्कि कृषि और उद्योग में आय सृजन एवं मूल्य संवर्धन के अवसर भी प्रदान करते हैं।

रंग और रंगद्रव्य: फूलों का उपयोग प्राकृतिक रंगद्रव्य के स्रोत के रूप में हाल के वर्षों में काफी ध्यान आकर्षित कर चुका है। इसका मुख्य कारण पर्यावरण के अनुकूल होना और विभिन्न उद्योगों जैसे खाद्य, वस्त्र और औषधि में व्यावसायिक संभावनाएँ होना है। विशेष रूप से गेंदा के फूल ल्यूटिन का समृद्ध स्रोत माने जाते हैं। ल्यूटिन एक कैरोटिनॉइड पिगमेंट है, जिसका खाद्य और वस्त्र उद्योग में बढ़ते हुए उपयोग देखा जा रहा है, क्योंकि इसका रंग अत्यंत स्पष्ट और आकर्षक होता है।गेंदा के फूलों से निकाले गए रंग का उपयोग पोल्ट्री फ़ीड में भी किया जाता है, जिससे पक्षियों और अंडों की जर्दी का रंग गहरा और बाजार में अधिक स्वीकार्य बनता है। गेंदा के अलावा, गुलाब, केसर, और गुड़हल जैसे अन्य फूलों का भी प्राकृतिक रंग तैयार करने में उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, केसर के फूलों की पंखुड़ियों से रंग निकालकर पश्मीना शॉल पर लगाया जाता है, जबकि गुड़हल का उपयोग वस्त्रों में रंगाई के लिए संभावित माना गया है। इस प्रकार, फूलों के प्राकृतिक रंगद्रव्य न केवल पर्यावरण के अनुकूल हैं, बल्कि उद्योगों में रचनात्मक और व्यावसायिक अवसर भी प्रदान करते हैं।

3. सूखे फूलों के उत्पाद

सूखे फूलों की सजावट: सूखे फूलों को उसी तरह सजाया जा सकता है जैसे ताजे कटे हुए फूलों को सजाया जाता है। इन्हें वेज़, गुलदस्ते या दीवार पर सजावट के रूप में लगाया जा सकता है, इसके लिए फूलों को सजावटी पट्टियों या बैंड में बांधकर रखा जाता है। प्रेस किए हुए पत्ते और फूल लैमिनेट किए जा सकते हैं, जिससे उत्पाद की आयु बढ़ती है, और इन्हें एलबम में सजाया जा सकता है। सूखे फूलों को संभालते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि ये ताजे फूलों की तुलना में अधिक नाजुक होते हैं। फूलों को अत्यंत सावधानी और उच्च सटीकता के साथ सुखाया जा सकता है, ताकि वे प्राकृतिक ताजगी जैसी दिखें और लंबे समय तक सुंदर बनाए रखे जा सकें।सूखे फूल तेजी से लोकप्रिय हो रहे हैं, क्योंकि ताजे फूल कटाई के बाद बीमारियों के प्रति संवेदनशील होते हैं और उनकी वेज़ लाइफ कम होती है। विभिन्न सुखाने की तकनीकों के माध्यम से कई प्रकार के फूलों को सुखाया जा सकता है। कुछ फूल विशेष रूप से आसानी से सुखाए जा सकते हैं और उनका उपयोग सूखे फूलों के उत्पाद और सजावट में सरलता से किया जा सकता है।उदाहरण के लिए, हेलिक्रीसम, डेल्फिनियम, हेलिप्टेरम, अमरनाथस, कारैथमस, जिप्सोफिला,गुलाब जैसे फूल सूखे फूलों के उत्पाद और सजावट में आसानी से उपयोग किए जा सकते हैं।

गुलदस्ते: गुलदस्ता फूलों का एक संग्रह होता है, जिसे रचनात्मक तरीके से सजाया जाता है। फूलों के गुलदस्ते घरों या सार्वजनिक भवनों की सजावट के लिए लगाए जा सकते हैं, या हाथ में पकड़कर भी उपयोग किए जा सकते हैं। गुलदस्ते अक्सर जन्मदिन, सालगिरह जैसे विशेष अवसरों पर दिए जाते हैं। इसके अलावा, वे विवाह समारोहों में भी बड़े पैमाने पर उपयोग किए जाते हैं। घर की सजावट के लिए गुलदस्तों को फूलदान या प्लांटर में लगाया जा सकता है, और इन्हें पारंपरिक या आधुनिक शैली में सजाया जा सकता है।

पोतपूरी: पोतपूरी सूखे, प्राकृतिक सुगंधित पौधों का मिश्रण होती है, जिसे घर में हल्की और प्राकृतिक खुशबू फैलाने के लिए उपयोग किया जाता है। इसे आमतौर पर सजावटी लकड़ी के कटोरे में रखा जाता है, या पतली कपड़े की छोटी थैलियों में बांधा जाता है। पोतपूरी में आमतौर पर सूखे फूलों का उपयोग किया जाता है। गुलाब की पंखुड़ियाँ, गोम्फरेना, गेंदा की पंखुड़ियाँ और कमल की कलीयाँ पोतपूरी बनाने के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती हैं। पोतपूरी की खुशबू का आधार पौधों में पाए जाने वाले सुगंधित तेल होते हैं।

फ्लोरल ज्वेलरी: फ्लोरल ज्वेलरी एक सुंदर और अनोखा तरीका है, जिसमें सूखे फूलों को पहनने योग्य आभूषणों में शामिल किया जाता है। इसका एक लोकप्रिय तरीका इलेक्ट्रोप्लेटिंग है, जिसमें फूलों को सोने या प्लेटिनम की पतली परत से कोट किया जाता है। इससे फूल सुरक्षित रहते हैं और उन्हें भव्य रूप मिलता है।ऑर्किड के फूल इस प्रकार की ज्वेलरी के लिए विशेष रूप से उपयुक्त माने जाते हैं और थाईलैंड, सिंगापुर और मलेशिया जैसे देशों में आमतौर पर उपयोग किए जाते हैं। भारत में इस क्षेत्र में बहुत बड़ी संभावनाएँ हैं, क्योंकि देश में विशाल आनुवंशिक संसाधन और कुशल कारीगर मौजूद हैं।फ्लोरल ज्वेलरी का उपयोग केवल व्यक्तिगत आभूषण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे सांस्कृतिक और धार्मिक आयोजनों में पारंपरिक पोशाक के हिस्से के रूप में भी पहना जा सकता है। यह न केवल खूबसूरती बढ़ाती है बल्कि पारंपरिक और आधुनिक शैली का संयोजन भी प्रस्तुत करती है।

मोमबत्ती निर्माण: सूखे फूलों को मोमबत्तियों में मिलाना उनकी सुंदरता और खुशबू बढ़ाने का एक लोकप्रिय तरीका है। सूखे फूलों को मोमबत्ती के मोम के भीतर एम्बेड किया जा सकता है या मोमबत्ती की सतह पर सजावट के रूप में लगाया जा सकता है। इसके लिए पिघले हुए मोम में डालने से पहले फूलों को मोल्ड में रखा जाता है या पिघले मोम की सतह पर फूलों को रखा और धीरे-धीरे दबाया जाता है। इस प्रक्रिया से एक सुंदर और सुगंधित मोमबत्ती तैयार होती है, जिसे सजावट के लिए या उपहार के रूप में उपयोग किया जा सकता है। यह न केवल आकर्षक दिखती है बल्कि प्राकृतिक फूलों की खुशबू भी प्रदान करती है।

स्नान और अन्य शरीर की देखभाल उत्पाद: सर्वश्रेष्ठ हर्बल स्नानों में सूखे फूलों का उपयोग किया जाता है। सूखे फूल सीधे स्नान के पानी में डाले जा सकते हैं या उन्हें हर्बल इन्फ्यूज़न के रूप में तैयार किया जा सकता है। इसके अलावा, कई अन्य सूखे फूलों का उपयोग लोशन, टोनर, फेसियल स्टीम, मास्क, हर्बल हेयर रिंस और स्प्रे जैसी व्यक्तिगत देखभाल की वस्तुओं में भी किया जाता है।

प्रेस किए हुए फूलों के उत्पाद: प्रेस किए हुए फूलों में ग्रीटिंग कार्ड, बुकमार्क, पेपर वेट, वॉल हैंगिंग, टेबलटॉप, टेबल मैट आदि शामिल हैं। फूलों और पत्तियों को हर्बेरियम विधि के माध्यम से सुखाया जाता है और फिर इन्हें फेविकोल की मदद से कलात्मक तरीके से चिपकाया जाता है। इन उत्पादों में और अधिक मूल्य जोड़ने के लिए पंखुड़ियों वाले हस्तनिर्मित कागज को आधार सामग्री के रूप में उपयोग किया जा सकता है।









पंखुड़ियों वाला हस्तनिर्मित कागज: हस्तनिर्मित कागज हाल के वर्षों में प्लास्टिक या सामान्य कागज के पर्यावरण के अनुकूल विकल्प के रूप में लोकप्रिय हो गया है। यह न केवल पर्यावरण के लिए सुरक्षित है, बल्कि इसमें फूलों की पंखुड़ियों जैसी प्राकृतिक सामग्री जोड़ने से इसे एक अनोखा और विशिष्ट रूप भी मिलता है। धार्मिक और सामाजिक स्थलों से फूलों के अपशिष्ट का प्रबंधन हस्तनिर्मित कागज बनाने के लिए एक स्थायी कच्चा माल प्रदान कर सकता है। इस तरीके से न केवल शहर के मंदिरों, होटलों और सामुदायिक केंद्रों से उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट की मात्रा कम होती है, बल्कि इसे पर्यावरण के अनुकूल कागज के रूप में पुनर्चक्रित और पुन: उपयोग किया जा सकता है। हस्तनिर्मित कागज लकड़ी-मुक्त सामग्री का उपयोग करके बनाया जाता है और निर्माण प्रक्रिया के दौरान असली फूलों की पंखुड़ियाँ इसमें मिलाई जाती हैं, जिससे इसे एक अनोखा और खास रूप मिलता है। पंखुड़ियाँ खूबसूरती से बनावट वाले हस्तनिर्मित शीट्स में एम्बेड की जाती हैं, जो तैयार उत्पाद में सौंदर्य और आकर्षण का अतिरिक्त तत्व जोड़ती हैं।

फूलों का मूल्य संवर्धन न केवल आय और रोजगार के नए अवसर प्रदान करता है, बल्कि महिलाओं, युवाओं और छोटे उद्यमियों को सशक्त भी बनाता है। इससे कृषि और फूल अपशिष्ट का पुन: उपयोग करके संसाधनों का सतत् और प्रभावी उपयोग संभव होता है। ताजे और सूखे फूल, गुलकंद, गुलाब जल, एसेन्शियल ऑयल, प्राकृतिक रंग और हस्तनिर्मित कागज जैसे उत्पाद आर्थिक रूप से लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल हैं। यह नवाचार, रचनात्मकता और पारंपरिक कौशल को बढ़ावा देता है। फूलों के मूल्य संवर्धन से आर्थिक विकास, सामाजिक सशक्तिकरण और पर्यावरण संरक्षण को एक साथ सुनिश्चित किया जा सकता है।

नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि प्रबंधन

चन्द्रमणि डी. वाघमारे एवं विकास बामेल
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में नींबू वर्गीय फल जैसे नींबू, संतरा, किन्नू, मौसंबी तथा चकोतरा आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण फल फसलें हैं। इन फसलों की खेती देश के अनेक राज्यों में बड़े पैमाने पर की जाती है और यह किसानों की आय का प्रमुख स्रोत है। किंतु विभिन्न कीट एवं रोग इन फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। इन में एक अत्यंत महत्वपूर्ण किंतु प्रायः अदृश्य समस्या है - पादप परजीवी सूत्रकृमि (नेमाटोड)।

सूत्रकृमि सूक्ष्म, धागेनुमा, अखंडित गोल कृमि होते हैं, जो मिट्टी तथा पौधों के ऊतकों में निवास करते हैं। अधिकांश सूत्रकृमि लाभकारी होते हैं और मिट्टी में पोषक तत्वों के चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, परंतु कुछ प्रजातियाँ पौधों की जड़ों पर परजीवी बनकर भारी क्षति पहुँचाती हैं। पादप परजीवी सूत्रकृमियों के मुख में एक विशेष सूईनुमा संरचना होती है जिसे स्टाइलेट कहा जाता है। इसकी सहायता से वे पौधों की कोशिकाओं में प्रवेश कर उनका रस चूसते हैं।

नींबू वर्गीय फसलों में सूत्रकृमियों का प्रकोप धीरे-धीरे बढ़ने वाला होता है, इसलिए प्रारम्भिक अवस्था में इसकी पहचान करना कठिन होता है। यह समस्या पौधों की जड़ों को क्षति पहुँचाकर उनकी जल एवं पोषक तत्व ग्रहण करने की क्षमता को कम कर देती है, जिससे पौधों की वृद्धि रुक जाती है तथा फल उत्पादन एवं गुणवत्ता में उल्लेखनीय गिरावट आती है।

पादप परजीवी सूत्रकृमियों का स्वरूप एवं जीवन शैली

पौधों पर परजीवी सूत्रकृमियों को उनके भोजन एवं निवास की आदतों के आधार पर पहचाना जाता है। कुछ सूत्रकृमि पौधों की जड़ों के बाहर रहकर भोजन करते हैं, जबकि कुछ जड़ों के भीतर प्रवेश कर अपना अधिकांश जीवन वहीं व्यतीत करते हैं। ऐसे सूत्रकृमियों को अंतःपरजीवी सूत्रकृमि कहा जाता है।

अंतःपरजीवी सूत्रकृमि पौधों के ऊतकों के भीतर सुरक्षित वातावरण प्राप्त करते हैं। पौधे उन्हें भोजन प्रदान करते हैं तथा वे बाहरी प्रतिकूल परिस्थितियों, रोगजनकों, शत्रुओं, सूखे और रासायनिक दवाओं से भी कुछ सीमा तक सुरक्षित रहते हैं। यही कारण है कि इनका नियंत्रण अपेक्षाकृत कठिन होता है।

साइट्रस सूत्रकृमि (Citrus Nematode)

नींबू वर्गीय फलों में सबसे महत्वपूर्ण सूत्रकृमि रोगजनक साइट्रस सूत्रकृमि है। यह विश्व के अधिकांश नींबू बागानों में पाया जाता है तथा लगभग सभी प्रकार की मिट्टियों में जीवित रह सकता है। इसके अतिरिक्त इसकी कुछ जातियाँ अंगूर, जैतून, पर्सिमोन तथा ट्राइफोलिएट ऑरेंज जैसे पौधों पर भी पाई जाती हैं।

जीवन चक्र

साइट्रस सूत्रकृमि का जीवन चक्र अंडा, चार किशोर अवस्थाएँ तथा एक वयस्क अवस्था से मिलकर बना होता है। प्रथम एवं द्वितीय किशोर अवस्थाएँ अंडे के भीतर विकसित होती हैं। द्वितीय किशोर अवस्था (J2) अंडे से बाहर निकलती है और यही सक्रिय संक्रमणकारी अवस्था होती है।

कुछ किशोर नर में विकसित होते हैं। नर लंबे एवं पतले होते हैं तथा भोजन नहीं करते। वे जड़ों में प्रवेश भी नहीं करते। दूसरी ओर, मादा बनने वाले किशोर जड़ों की बाहरी सतह पर कुछ समय तक भोजन करने के बाद जड़ प्रांतस्था में प्रवेश कर जाते हैं। वहाँ वे विशेष पोषक कोशिकाओं का निर्माण कर भोजन ग्रहण करते हैं।

मादा सूत्रकृमि लगभग 100 अंडे देती है, जो जिलेटिन जैसे पदार्थ में सुरक्षित रहते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में इनका जीवन चक्र 4 से 8 सप्ताह में पूर्ण हो जाता है। 20 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान इनके विकास के लिए उपयुक्त माना जाता है।

शीथ सूत्रकृमि (Sheath Nematode)

शीथ सूत्रकृमि साइट्रस सूत्रकृमि की तुलना में कम व्यापक है, परंतु इसकी मेजबान सीमा अधिक विस्तृत होती है। यह विशेष रूप से रेतीली मिट्टियों में पाया जाता है। इसके शरीर पर एक अतिरिक्त बाहरी आवरण पाया जाता है, जिसके कारण इसे "शीथ सूत्रकृमि" कहा जाता है।

यह जड़ों की नोकों के पास भोजन करता है और जड़ों में गाँठें एवं सूजन उत्पन्न करता है। इसके परिणामस्वरूप जड़ प्रणाली कमजोर हो जाती है तथा पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।

लक्षण एवं क्षति

नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि संक्रमण के लक्षण प्रायः धीरे-धीरे प्रकट होते हैं। प्रारम्भ में पौधों की वृद्धि मंद पड़ जाती है। बाद में निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं—

- पत्तियों का पीला पड़ना
- पत्तियों का मुड़ना
- टहनियों का सूखना

- फल एवं पत्तियों का आकार छोटा होना
- पौधों की वृद्धि रुक जाना
- फल उत्पादन में कमी
- जड़ों का सड़ना एवं फीडर जड़ों का नष्ट होना

साइट्रस सूत्रकृमि से होने वाली समस्या को सामान्यतः "साइट्रस स्लो डिक्लाइन" कहा जाता है, क्योंकि इससे पौधे धीरे-धीरे कमजोर होकर सूखने लगते हैं।

अत्यधिक संक्रमित जड़ों पर मिट्टी के कण अंडों के जिलेटिन पदार्थ से चिपक जाते हैं, जिससे जड़ें मोटी एवं गहरी दिखाई देती हैं।

यदि पौधे पहले से ही जलभराव, लवणता, सूखा, ठंड अथवा अन्य रोगों से प्रभावित हों, तो सूत्रकृमि का प्रभाव और अधिक गंभीर हो जाता है।

क्षेत्र मूल्यांकन एवं निगरानी

सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए खेत या बाग का सही मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। यदि किसी क्षेत्र में पहले सूत्रकृमि की समस्या रही हो, तो नई फसल लगाने से पूर्व मिट्टी परीक्षण अवश्य कराना चाहिए।

नमूना संग्रहण की विधि

रोपण से पूर्व

- खेत को मिट्टी की बनावट एवं जल निकास के आधार पर विभिन्न भागों में विभाजित करें।

स्थापित बागों में

- रोगग्रस्त वृक्षों की ड्रिप लाइन के पास से मिट्टी एवं जड़ के नमूने लें।
- ड्रिप सिंचाई वाले बागों में एमिटर के आसपास से नमूने एकत्र करें।
- स्वस्थ दिखाई देने वाले वृक्षों से भी तुलना हेतु नमूने लें।

नमूना संग्रहण के प्रमुख बिंदु

1. प्रत्येक क्षेत्र से 10–20 उप-नमूने लें।
2. सभी उप-नमूनों को अच्छी तरह मिलाएँ।
3. नमूनों को प्लास्टिक बैग में भरकर छाया में रखें।
4. बैग पर स्थान, मिट्टी का प्रकार, मूलवृंत तथा लक्षणों की जानकारी लिखें।
5. नमूनों को शीघ्र प्रयोगशाला भेजें।

मृदा विश्लेषण का महत्व

प्रयोगशाला परीक्षण द्वारा मिट्टी या जड़ों में उपस्थित सूत्रकृमियों की संख्या ज्ञात की जाती है। इससे संक्रमण की गंभीरता का अनुमान लगाया जा सकता है।

हालाँकि केवल सूत्रकृमि संख्या ही उपज का निर्धारण नहीं करती, क्योंकि जलवायु, पोषण, रोग एवं अन्य कारक भी उत्पादन को प्रभावित करते हैं। फिर भी मृदा विश्लेषण प्रबंधन निर्णय लेने में अत्यंत सहायक होता है।

सूत्रकृमि प्रबंधन

नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए समेकित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। केवल रासायनिक नियंत्रण पर निर्भर रहना उचित नहीं है। स्वच्छता, प्रतिरोधी मूलवृंत, फसल चक्र एवं जैविक उपायों का समन्वित उपयोग अधिक प्रभावी सिद्ध होता है।

1. स्वच्छता उपाय

- प्रमाणित सूत्रकृमि-मुक्त पौध सामग्री का उपयोग करें।
- संक्रमित क्षेत्रों की मिट्टी एवं उपकरणों को अन्य बागों में न ले जाएँ।
- सिंचाई जल के बहाव से संक्रमण फैलने से रोकें।
- नर्सरी सदैव स्वच्छ एवं रोगमुक्त स्थान पर स्थापित करें।

2. फसल चक्र

नींबू वर्गीय पौधों की पुनः रोपाई से पूर्व 1–3 वर्षों तक गैर-मेजबान फसलों का चक्र अपनाने से सूत्रकृमियों की संख्या कम होती है।

3. प्रतिरोधी मूलवृंत का उपयोग

सूत्रकृमि-प्रतिरोधी अथवा सहिष्णु मूलवृंतों का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

ट्राइफोलिएट ऑरेंज तथा इसके संकर मूलवृंत साइट्रस सूत्रकृमि के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सहनशील पाए गए हैं। ये फाइटोफ्थोरा एवं ट्रिस्टेज़ा जैसे रोगों के प्रति भी सहनशीलता प्रदर्शित करते हैं।

4. जैविक प्रबंधन

जैविक नियंत्रण उपाय पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित एवं दीर्घकालिक होते हैं।

प्रमुख जैविक एजेंट

- *परप्यूरियोसिलियम लाइलैसिनम*
- पोकोनिया क्लैमाइडोस्पोरिया
- ट्राइकोडर्मा प्रजातियाँ
- बेसीलस एवं स्यूडोमोनास जीवाणु

ये जैव-एजेंट सूत्रकृमियों के अंडों एवं किशोर अवस्थाओं को नष्ट कर उनकी संख्या कम करते हैं।

कार्बनिक पदार्थों का उपयोग

नीम खली, सरसों खली, गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट के प्रयोग से भी सूत्रकृमियों की संख्या घटती है तथा मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है।

5. रासायनिक नियंत्रण

जहाँ संक्रमण अत्यधिक हो, वहाँ निमेटीसाइड्स का प्रयोग किया जा सकता है।

रोपण पूर्व उपचार

यदि खेत में पहले से साइट्रस सूत्रकृमि का प्रकोप रहा हो, तो रोपण से पूर्व मिट्टी धूम्रीकरण (फ्यूमिगेशन) लाभकारी हो सकता है।

रोपण उपरांत उपचार

स्थापित बागों में नेमाटोसाइड्स का प्रयोग तभी करना चाहिए जब सूत्रकृमि की संख्या मध्यम या अधिक स्तर पर हो।

रासायनिक दवाओं का प्रयोग सदैव कृषि विशेषज्ञों की सलाह अनुसार एवं अनुशंसित मात्रा में ही करना चाहिए।

समेकित सूत्रकृमि प्रबंधन की आवश्यकता

नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए केवल एक उपाय पर्याप्त नहीं होता। इसके लिए निम्नलिखित उपायों का समेकित उपयोग सर्वोत्तम माना जाता है—

- रोगमुक्त पौध सामग्री
- प्रतिरोधी मूलवृंत
- फसल चक्र
- जैविक नियंत्रण
- कार्बनिक खादों का उपयोग
- संतुलित पोषण एवं उचित सिंचाई
- आवश्यकता पड़ने पर रासायनिक नियंत्रण

इन सभी उपायों के समन्वित उपयोग से सूत्रकृमियों की संख्या आर्थिक क्षति स्तर से नीचे रखी जा सकती है।

निष्कर्ष

नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि एक गंभीर किंतु अक्सर उपेक्षित समस्या है। ये सूक्ष्म परजीवी पौधों की जड़ों को क्षति पहुँचाकर उनकी वृद्धि, स्वास्थ्य एवं उत्पादन क्षमता को प्रभावित करते हैं। उचित पहचान, समय पर निगरानी तथा समेकित प्रबंधन उपायों को अपनाकर इस समस्या को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।

भविष्य में जैविक एवं पर्यावरण-अनुकूल तकनीकों के विकास तथा प्रतिरोधी मूलवृंतों के व्यापक उपयोग से नींबू वर्गीय फलों में सूत्रकृमि प्रबंधन अधिक टिकाऊ एवं लाभकारी बनाया जा सकता है।

फसल अवशेष का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

मानसी रैकवार, शिव शंकर शर्मी, रंजीत कुशवाहा, अश्वनी पाण्डेय, अंशिका एवं महेश राव
भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान, पूसा कैंपस, नई दिल्ली

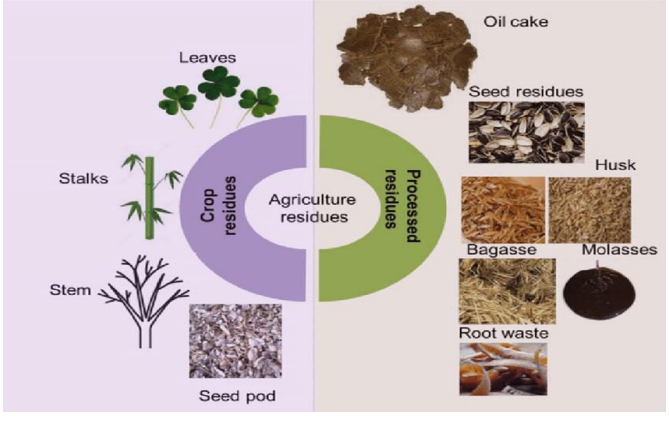
वैश्विक स्तर पर अनाज उत्पादन से हर वर्ष 3.7 बिलियन मेगाग्राम (Mg) से अधिक फसल अवशेष उत्पन्न होते हैं, जिनमें से लगभग 2.8 बिलियन मेगाग्राम अनाज फसलों (cereals) से प्राप्त होते हैं। पहले फसल अवशेषों को केवल कृषि अपशिष्ट (Agricultural Waste) माना जाता था, लेकिन अब इन्हें मृदा स्वास्थ्य सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में देखा जाने लगा है।

फसल अवशेष

फसल कटाई के बाद खेत में बचा हुआ पौधे का भाग - जैसे भूसा (Straw), तना (Stalks), डंठल (Stems), पत्तियाँ (Leaves) और जड़ें (Roots) - को फसल अवशेष (Crop Residue) कहा जाता है। यह वे गैर-आर्थिक (non-economic) पौधे के भाग होते हैं जो कटाई के बाद खेत में रह जाते हैं या पैकिंग शेड/प्रसंस्करण (Processing) के दौरान निकालकर त्याग दिए जाते हैं।

कृषि फसल अवशेष (Agricultural Crop Residues) दो प्रकार के होते हैं-

1. **खेत अवशेष (Field Residues)-** खेत अवशेष वे गैर-आर्थिक (non-economic) पदार्थ होते हैं जो फसल की कटाई के बाद खेत या बागान (Orchard) में शेष रह जाते हैं। इन अवशेषों में तना (Stalks), ठूंठ / डंठल (Stubble / Stems), पत्तियाँ (Leaves), बीज Hell (Seed Pods) शामिल हैं।
2. **प्रोसेस अवशेष-** प्रोसेस अवशेष (Process Residues) वे पदार्थ होते हैं जो फसल को उपयोगी उत्पाद में प्रसंस्करण (Processing) करने के बाद शेष रह जाते हैं। इन अवशेषों में भूसी (Husks), बीज (Seeds), बगास (Bagasse), शीरा (Molasses), जड़ें (Roots) शामिल हैं।



चित्र 1: कृषि फसल अवशेषों के प्रकार

फसल अवशेष का मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

1. मृदा उर्वरता एवं जैविक पदार्थ में वृद्धि (Soil Fertility and Organic Matter)

इसमे फसल अवशेष सड़कर ह्यूमस (Humus) बनाते हैं, जिससे मिट्टी में जैविक पदार्थ (Soil Organic Matter - SOM) की मात्रा बढ़ती है इससे मिट्टी की उर्वरता (Fertility) बढ़ती है। अवशेषों के विघटन से नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), पोटाश (K) जैसे पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। इससे पोषक तत्वों का चक्रण (Nutrient Cycling) बेहतर होता हैं।

2. मिट्टी की संरचना में सुधार (ImprovementIn Soil Structure)

इसमे फसल अवशेष मिट्टी के कणों को जोड़कर ग्रेन्युलर Xd (Granular Structure) बनाते हैं। जिससे मिट्टी भुरभुरी (छपरा Structure) और अधिक उपजाऊ बनती है, और मृदा कणों के समूह (Soil Aggregates) की स्थिरता बढ़ती है।

3. जल प्रबंधन एवं जल धारण क्षमता (Water Management and Water Holding Capacity)

इसमे जैविक पदार्थ बढ़ने से मिट्टी की जल धारण क्षमता (Water Holding Capacity) बढ़ती है। जो फसल अवशेष मल्च (Mulch) & रूप में कार्य कर वाष्पीकरण (Evaporation) को कम करते हैं। इससे पानी का अवशोषण (Infiltration) बढ़ता है और सूखे की स्थिति में फसलों को लाभ मिलता है।

4. कटाव नियंत्रण/ मृदा अपरदन कमी (Erosion Control)

इसमे मृदा सतह पर अवशेष होने से वर्षा का सीधा प्रभाव कम होता है, जिससे हवा और पानी से होने वाला कटाव (Wind & Water Erosion) घटता है। जो ऊपरी उपजाऊ मिट्टी (Top Soil) की रक्षा करता है।

5. सूक्ष्मजीव गतिविधि एवं मृदा सुधार (Microbial Activity and SoilImprovement)

फसल अवशेष सूक्ष्मजीवों (बैक्टीरिया) के लिए भोजन का कार्य करते हैं। इससे खनिजीकरण (Mineralization) जैसी

जैविक क्रिया बढ़ती हैं। जो मिट्टी के जीक-जंतुओं के लिए अनुकूल वातावरण बनाते हैं। साथ ही मिट्टी की लवणता (Salinity) कम करने और भारी धातुओं (Heavy Metals) की उपलब्धता को सीमित करने में भी मदद करते हैं।

फसल अवशेष के गलत प्रबंधन से नकारात्मक प्रभाव

यदि फसल अवशेष का सही तरीके से प्रबंधन नहीं किया जाए, तो इसका मिट्टी और फसल उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। खेत में अवशेषों की अत्यधिक मात्रा या उनका सही ढंग से विघटन न होने से कई समस्यायें उत्पन्न होती हैं।

1. नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Immobilization)

यदि फसल अवशेषों में कार्बन की मात्रा अधिक (8: N अनुपात अधिक) होती है, तो सूक्ष्मजीव उन्हें विघटित करते समय मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन को अस्थायी रूप से बांध लेते हैं। इसके परिणामस्वरूप फसल को प्रारंभिक अवस्था में नाइट्रोजन की कमी का सामना करना पड़ सकता है, जिससे पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।

2. कीट एवं रोगों का आश्रय

यदि फसल अवशेषों को बिना सड़ाए या बिना प्रबंधन के खेत में छोड़ दिया जाए, तो उनमें रोगजनक सूक्ष्मजीव, कीट और खरपतवार पनप सकते हैं। यह स्थिति अगली फसल में रोग और कीटों के प्रकोप को बढ़ा सकती है, जिससे उत्पादन में कमी आ सकती है।

3. जुताई और बुवाई में कठिनाई

खेत में अधिक मात्रा में फसल अवशेष होने पर जुताई और बुवाई की प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है। ऐसी स्थिति में बीज का मिट्टी से उचित संपर्क नहीं बन पाता, जिससे अंकुरण और पौधों की प्रारंभिक वृद्धि में समस्या आ सकती है।

अवशेष प्रबंधन (Crop Residue Management - CRM)

फसल अवशेष प्रबंधन (CRM) का अर्थ है पौधे या फसल के गैर-व्यावसायिक (Non-commercial) भागों- जैसे तना, पत्तियाँ, आदि का उपयोग मिट्टी की सुरक्षा या सुधार (Improvement) के लिए करना। अर्थात अवशेषों को जलाने के बजाय उन्हें वैज्ञानिक तरीके से मिट्टी में मिलाना या सतह पर संरक्षित रखना ही फसल अवशेष प्रबंधन कहलाता है।इसका उद्देश्य मृदा स्वास्थ्य में सुधार, पर्यावरण प्रदूषण को रोकना तथा टिकाऊ कृषि (Sustainable Agriculture) को बढ़ावा देना है।

फसल अवशेष प्रबंधन के प्रकार

(क) खेत में प्रबंधन (On-field Management)

1. सतह पर अवशेष संरक्षण एवं मल्चिंग (Surface Retention and Mulching): इस विधि में मिट्टी की सतह पर किसी सामग्री की परत बिछाई जाती है। फसल अवशेष (पराली, पत्तियाँ, तना आदि) को मल्च (Mulch) के रूप में उपयोग किया जा सकता है। सतह अवशेष संरक्षण एवं मल्च के कई लाभ होते हैं। यह मिट्टी में नमी को लंबे समय तक बनाए रखने में मदद करता है, जिससे पानी की उपलब्धता बनी रहती है। साथ ही, यह खरपततवारों की वृद्धि को कम करता है और मिट्टी के तापमान को संतुलित रखता है। इसके अलावा, इससे मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ता है, जिससे उसकी संरचना में सुधार होता है। मल्चिंग वर्षा और हवा के कारण होने वाले मिट्टी के कटाव को भी कम करती है, जिससे भूमि की गुणवत्ता सुरक्षित रहती है।

2. कम्पोस्टिंग (Composting): कम्पोस्टिंग एक जैविक प्रक्रिया (Biological Process) है, जिसमें सूक्ष्जीव मुख्यतः फफूंद (Fungi) और बैक्टीरिया Bacteria) ऑक्सीजन की उपस्थिति में अपघटनीय जैविक अपशिष्ट को हयूमस जैसे पदार्थ में परिवर्तित करते हैं। तैयार कम्पोस्ट मिट्टी जैसा दिखाई देता है। इसमें कार्बन और नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है। यह पौधों की वृद्धि के लिए उत्कृष्ट माध्यम है। इसके कई लाभ होते हैं कम्पोस्ट मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाता है, जिससे पौधों को लंबे समय तक नमी मिलती रहती है। यह मिट्टी को भुरभुरी और जुताई योग्य बनाता है, जिससे खेती करना आसान हो जाता है। साथ ही, यह मिट्टी में पोषक तत्वों को लंबे समय तक बनाए रखने में मदद करता है और मृदा की उर्वरता तथा जैविक पदार्थ की मात्रा को भी बढ़ाता है।

(ख) खेत के बाहर प्रबंधन (Off-Field Management)

1. बैलिंग: भूसा हटाना (Baling & Removing the Straw) में फसल way का विभिन्न कार्यों में उपयोग तभी संभव है जब उसे खेत से बाहर ले जाया जाता है। स्ट्रॉबेलर मशीन धान और गेहूँ के भूसे को इकट्ठा कर गांठ (Bales) बनाती है। यह एक व्यावसायिक और प्रभावी तकनीक है।



चित्र 2: बेलिंग

2. पशु आहार (Livestock Feed): भारत में पारंपरिक रूप से फसल अवशेष को पशुओं के चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। और कभी-कभी इसे रासायनिक उपचार (Chemical treatment) के साथ पूरक आहार के रूप में दिया जाता है। लेकिन फसल अवशेष की पाचन क्षमता (Digestibility) कम होती है, इसलिए इसे अकेले चारे के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता बल्कि पराली में सिलिका (Silica) अधिक होने के कारण यह निम्न गुणवत्ता का चारा माना जाता है।

3. बायोचार उत्पादन (Biochar Production): बायोचार लकड़ी के कोयले जैसा पदार्थ है, जिसका उपयोग मृदा सुधार Soil Amendment) के रूप में किया जाता है। इसे पायरोलिसिस (Pyrolysis) प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है, जिसमें कम ऑक्सीजन की स्थिति में उच्च तापमान पर बायोमास को गर्म किया जाता है। एक बार प्रक्रिया शुरू होने पर यह स्वयं चलती रहती है और बाहरी ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती।



चित्र 3: बायोचार उप-उत्पाद (By-products): 1. सिंगैस (15 + CO), 2. मीथेन (CH,) - अल्प मात्रा में, 3. कार्बनिक अम्ल, 4. अतिरिक्त ऊष्मा।

फसल अवशेष प्रबंधन (CRM) योजना का उद्देश्य

फसल अवशेष प्रबंधन (CRM) जिसमें केंद्रीय क्षेत्र योजना वर्ष 2018-19 से लागू की गई, जिसका उद्देश्य पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में पराली जलाने से होने वाले वायु प्रदूषण को कम करना तथा फसल अवशेष प्रबंधन के लिए आवश्यक मशीनरी पर अनुदान प्रदान करना है।

योजना के मुख्य प्रावधान

1. वित्तीय सहायता Subsidy) किसानों को फसल अवशेष प्रबंधन मशीनरी खरीदने पर 50% अनुदान लागू और सहकारी समितियाँ, FPOs (Farmer Producer Organizations) और पंचायतों को कस्टम हायरिंग सैंटर (CHCs) स्थापित करने के लिए 80% अनुदान लागू करती हैं।

2. खेत में फसल अवशेष प्रबंधन हेतु प्रोत्साहित मशीनें, जैसे : डिस्क हल (चक्र हल), रोटावेटर (घूर्णन जुताई यंत्र), कल्टीवेटर/ खरपतवार नियंत्रण यंत्र। यह मशीनें खेत में (in-situ) अवशेषों को संभालने/मिट्टी में मिलाने में मदद करती हैं।



चित्र 4: फसल अवशेष प्रबंधन हेतु उपयोगी मशीनें

3. Ex-situ उपयोग (खेत से बाहर उपयोग) के लिए मशीनें: बेलर (Baler) और रेक (Rake) – जिनसे पराली को गांठ (Bales) के रूप में एकत्र कर अन्य उपयोग (चारा, बायोएनेर्जी आदि) के लिए ले जाया जाता है।

निष्कर्ष

फसल अवशेष पौधे के वे भाग हैं जो फसल कटाई के बाद खेत में शेष रह जाते हैं, जैसे तना, पत्तियाँ, भूसा और जड़ें। पहले इन्हें कृषि अपशिष्ट माना जाता था, लेकिन अब यह मृदा स्वास्थ्य सुधारने के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन माने जाते हैं। ये मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाते हैं, पोषक तत्वों का चक्रण सुधारते हैं, जल धारण क्षमता बढ़ाते हैं और मृदा अपरदन को कम करते हैं। हालाँकि, इनके गलत प्रबंधन से नाइट्रोजन की कमी, कीट-रोगों का प्रसार और खेती कार्यों में कठिनाई हो सकती है। इसलिए फसल अवशेष प्रबंधन (CRM) के अंतर्गत इन्हें जलाने के बजाय मल्चिंग, कम्पोस्टिंग या अन्य उपयोगों के माध्यम से वैज्ञानिक तरीके से प्रबंधित करना आवश्यक है। इससे मृदा स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा मिलता है।

दीवारों पर बगीचा: वर्टिकल गार्डनिंग की नई सोच

राखी सिंह[1], अमित कनौजिया[2], अजय कुमार सिंह[2], राकेश कुमार[3], आशीष प्रताप सिंह[4] एवं रोहित मिश्रा[1]

[1]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश
[2]बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा, उत्तर प्रदेश
[3]शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू (जम्मू एवं कश्मीर)
[4]नागालैंड विश्वविद्यालय, मेहज़ीफेमा परिसर, नागालैंड

आजकल घरों तथा बड़े शहरों में रहने वाले लोगों के फ्लैटों में जगह की कमी के कारण वर्टिकल गार्डनिंग लोकप्रिय होती जा रही है, जिसमें कम जगह में ही विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे लगाए जा सकते हैं। इस तरह की गार्डनिंग इनडोर या आउटडोर दोनों जगह के लिए बेस्ट होती है जिसमें आप कम जगह में भी अधिक वेराइटी के पेड़-पौधे उगा सकते हैं। वर्टिकल गार्डन की खास बात यह है कि इसमें पेड़-पौधों को जमीन पर न उगाकर बाउंड्री वॉल या घर की दीवारों पर उगाया जाता है जिससे मकान की अनुपयोगी जगह का भी इस्तेमाल हो जाता है। यदि आप शहरी क्षेत्रों में रहते हैं जहां गार्डनिंग करने के लिए ज्यादा जगह नहीं है, तब भी आप अपनी मन पसंद फल-फूल, हर्ब्स आदि के पौधे बड़ी ही आसानी से उगा सकते हैं। इनडोर या आउटडोर दीवारों, खिड़कियों पर हैंगिंग पॉट्स और ग्रो बैग में या प्लांट स्टैंड में गमलों को रखकर उनमें पेड़-पौधे लगाना, वर्टिकल गार्डनिंग कहलाता है और इस प्रकार तैयार किए हुए गार्डन को वर्टिकल गार्डन कहते हैं, जिसे उर्ध्वधिर गार्डन या लम्बवत गार्डन भी कहा जाता है।

लोकेशन के अनुसार पौधों का चुनाव

उर्ध्वधिर गार्डन के लिए आप चुनी गई लोकेशन के अनुसार पौधों का चुनाव कर सकते हैं, जहाँ पौधों को उनकी आवश्यकता अनुसार धूप, तापमान, पानी इत्यादि प्राप्त हो सके। इसमें आप विभिन्न प्रकार के फ्लावर प्लांट, क्रीपर वेजिटेबल, हर्ब्स तथा डेकोरेटिव प्लांट्स आदि लगा सकते हैं। उर्ध्वधिर बागवानी या वर्टिकल गार्डन में छोटे आकार के पेड़-पौधे लगाना आपके गार्डन की सुन्दरता को बढ़ाने के लिए बेस्ट ऑप्शन है। कुछ प्रमुख डेकोरेटिव प्लांट्स के नाम निम्न हैं, जिन्हें आप अपने लम्बवत गार्डन में लगा सकते हैं

जैसे-मनी प्लांट, स्नेक प्लांट, बाम्बू, बोन्साई प्लांट, एलोवेरा, पीस लिली, स्ट्रिंग ऑफ़ पर्ल, ड्रासैना, फेलेनोप्सिस, एस्पेरेगस, कॉर्डिलाइन, स्पाइडर प्लांट, हावोर्थिया, ट्रेडेस्कैंशिया, फिटोनिया, बोस्टन फर्न, क्लेमाटिस, गार्डनिया, मरांटा, हैडेरा हेलिक्स, हाइड्रेंजिया आदि।

संरचना निर्माण

वर्टिकल गार्डन के लिए लोहे, एल्युमिनियम, लकड़ी या प्लास्टिक की मजबूत फ्रेमिंग तैयार की जाती है। इस फ्रेम का उद्देश्य पौधों, मिट्टी और पानी के भार को सहन करना होता है। आधुनिक प्रणालियों में मॉड्यूलर पैनल, पॉकेट सिस्टम या फेल्ट लेयर का उपयोग किया जाता है, जो दीवार से थोड़ी दूरी पर लगाए जाते हैं ताकि वेंटिलेशन बना रहे और दीवार सुरक्षित रहे। दीवार को नमी से बचाने के लिए उस पर प्लास्टिक शीट, पीवीसी पैनल या अन्य जलरोधी सामग्री लगाई जाती है। इसके ऊपर एक बैक सपोर्ट लेयर लगाई जाती है, जो पौधों और माध्यम को सहारा देती है। यह चरण दीर्घकालिक स्थायित्व के लिए अत्यंत आवश्यक है।

पौधे उगाने के लिए मिट्टी तैयार करें

वर्टिकल गार्डन में पौथे लगाने के लिए सही जगह, पौधे तथा पॉट्स चुन लिए हैं, तो अब बारी आती है पॉट्स में पौधों को लगाने की। इसके लिए सबसे पहले हमें पौधों की ग्रोईंग कं डीशन को देखते हुए मिट्टी तैयार करनी होगी। अधिकांश पौधे उचित जलनिकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी में उगना पसंद करते हैं। अगर आपके पास गार्डन की पुरानी मिट्टी है तो आप इसमें कुछ कार्बनिक पदार्थ, खाद आदि मिलाकर पौधों के लिए मिट्टी तैयार कर सकते हैं। मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए आप नीम खली, वर्मी कम्पोस्ट, कोको पीट आदि मिला सकते हैं। अब चुने हुए पॉट और ग्रो बैग्स में तैयार मिट्टी भरें और पौधे लगाएं। आमतौर पर पौधों की अच्छी ग्रोथ के लिए कार्बनिक पदार्थों और पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, यह पौषक तत्व उन्हें मिट्टी के माध्यम से उपलब्ध कराए जाते हैं। आप सामान्य मिट्टी में रेत, पर्लाइट या वर्मीकुलाईट, गोबर खाद, वर्मीकम्पोस्ट, मस्टर्ड केक, नीम केक और कौकोपीट आदि जैविक खाद मिलाकर मिट्टी तैयार कर सकते हैं। पौधों को अच्छी तरह बढ़ने के लिए पर्याप्त धूप की आवश्यकता होती है, लेकिन धूप की जरूरत पौधों की किस्मों के आधार पर अलग-अलग हो सकती है, इसीलिए चुने गये पौधों की धूप की आवश्यकताओं के अनुसार पौधों को हैंग करें या रखें।

वर्टिकल गार्डन प्लांट केयर

अपने तैयार किये गये वर्टिकल गार्डन को हमेशा सुन्दर तथा पेड़-पौधों को स्वस्थ बनाये रखने के लिए आपको अपने पौधों की नियमित रूप से देखभाल करनी चाहिए। पौधों की हेल्दी ग्रोथ के लिए उन्हें समय पर जरूरत के अनुसार पानी दें, एवं समय-

समय पर पौधों की प्रूनिंग करते रहें, ताकि पौधे स्वस्थ रहें। वर्टिकल गार्डनिंग करते समय आपको अपने पॉटेड प्लांट को नियमित रूप से चेक करने की आवश्यकता होती है तथा जरूरत पड़ने पर पौधों को रिपॉट भी किया जाना चाहिए।

वर्टिकल गार्डन के लाभ

होम डेकोर

वर्टिकल गार्डनिंग सै आप अपने घर को एक एस्थेटिक रूप दे सकते हैं। इसे आप अपने घर की बालकनी की रेलिंग पर, दीवारों पर या फेंसिंग पर लगा सकते हैं, जो आपके घर की सुंदरता बढ़ने में मदद करेगा। इसके लिए आप अलग-अलग तरह के और अलग-अलग रंग के पौधों का इस्तेमाल कर सकते हैं। इंडोर प्लांट्स से आप अपने घर के अंदर की दीवारों को भी सजा सकते हैं। यह आपके घर को और जीवंत दिखाएगा। अपने घर में हरियाली भरे एक कोने में आप दिन भर की भाग-दौड़ के बाद रिलैक्स भी कर सकते हैं।

कम जगह

वर्टिकल गार्डनिंग में आम गार्डनिंग की तुलना में कम जगह में ज्यादा पौधे उगाए जा सकते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इसमें नॉर्मल गार्डनिंग की तरह जमीन पर पौधे नहीं लगाए जाते बल्कि दीवार, फैन्स जैसी जगहों का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें उस स्पेस का इस्तेमाल होता है, जो आमतौर पर खाली बच जाता है। यह खासकर शहरी इलाकों में ज्यादा काम आता है क्योंकि यहां खुला स्पेस कम होता है।

एयर प्यूरीफायर

इस प्लांटिंग विधि से आप अपने घर में अधिक मात्रा में इंडोर प्लांट्स लगा सकते हैं, जो ज्यादा ऑक्सिजन रिलीज करते हैं। ये प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से गैसीय प्रदूषको को अवशोषित करते हैं तथा अपनी पत्तियों एवं शाखाओं के माध्यम से वायुमंडलीय कणों को फिल्टर करते हैं। इससे आपको साफ हवा मिलती है। इसके साथ ही आप कुछ ऐसे प्लांट्स लगा सकते हैं, जो हवा से टॉक्सिन रिमूव करने में कारगर होते हैं जैसे स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट। ग्रीन वॉल्स घर की सतह के तापमान को कम करने में सक्षम पाई गई हैं।

मैनेज करना है आसान

वर्टिकल गार्डनिंग में पौधों की देखभाल करना बेहद ही आसान हो जाता है। इसमें पौधों के बीच की दूरी को ज्यादा बेहतर तरीके से मैनेज किया जा सकता है। इससे पौधों को बढ़ने के लिए जगह भी मिल जाती है और ओवरक्राउडिंग के कारण पौधों की ग्रोथ में रुकावट भी नहीं होती। इसमें पानी की भी बचत होती है क्योंकि इसमें सिर्फ पौधों की जड़ों को पानी दिया जाता है, जिससे जरूरत जितने पानी का ही इस्तेमाल होता है।

वर्टिकल गार्डन के प्रकार

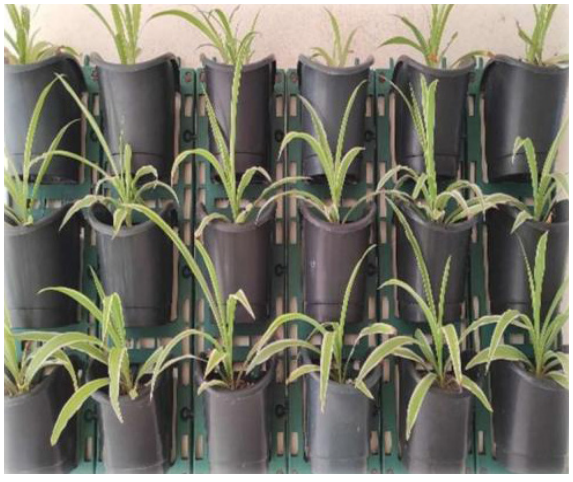
ग्रीन वॉल्स

ग्रीन वॉल वर्टिकल गार्डनिंग का सबसे सामान्य और लोक प्रिय रूप है। इसमें दीवारों पर पौधों को विशेष पैनलों, कंटेनरों या संरचनाओं के माध्यम से उगाया जाता है। दीवार की सतह पर पौधों की परत बनाई जाती है। जो आपके घर की सुंदरता बढ़ने में मदद करेगा। तापमान/नियंत्रण और वायु प्रदूषण में कमी लाने में योगदान करते हैं।



पॉकेट गार्डन

पॉकेट गार्डन एक छोटा, सीमित स्थान वाला बगीचा होता है, जिसे अक्सर पौधों को रखने के लिए कंटेनर या पॉकेट का उपयोग करके बनाया जाता है। ये छोटे बगीचे सीमित जगह वाले क्षेत्रों, जैसे बालकनी, खिड़कियों या यहां तक कि घर के अंदर के स्थानों के लिए डिज़ाइन किए गए हैं। ये पॉकेट विभिन्न प्रकार के कंटेनर, पाउच या मॉड्यूलर सिस्टम हो सकते हैं जिन्हें किसी ऊर्ध्वाधर सतह से जोड़ा जा सकता है। यह तरीका शहरी वातावरण में विशेष रूप से लोकप्रिय है जहाँ जगह की कमी होती है, और उन लोगों के लिए एक समाधान प्रदान करता है जो छोटे पैमाने पर बागवानी का आनंद लेना चाहते हैं।



हैंगिंग गार्डन

हैंगिंग गार्डन एक प्रकार का बगीचा है इसमें पौधों को लटकते हुए कंटेनरों या बास्केट में उगाया जाता है, जिससे वे नीचे की ओर फैलते हैं। हैंगिंग गार्डन घर के अंदर और बाहर दोनों जगह बनाए जा सकते हैं, जो पौधों का एक आकर्षक दृश्य प्रस्तुत करते हैं। ये बहुमुखी होते हैं और इनमें विभिन्न प्रकार के पौधे शामिल किए जा सकते हैं, जैसे कि लताएँ, फूल वाले पौधे या जड़ी-बूटियाँ। इन उद्यानों को आमतौर पर हुक, पेगोला या छत पर लगे माउंट जैसी संर्वनाओं से लटकाया जाता है, जिससे उन स्थानों में हरियाली और सौंदर्य का स्पर्श जुड़ जाता है जिन्हें अन्यथा अनदेखा किया जा सकता है।



फ्रेम गार्डन

फ्रेम गार्डनिंग में पौधों को रखने और प्रदर्शित करने के लिए फ्रेम वाली संस्चनाओं का उपयोग किया जाता है। फ्रेम का मुख्य उद्देश्य पौधों को बढ़ने के लिए एक संरचित और व्यवस्थित स्थान प्रदान करना है, फ्रेम गार्डनिंग में, फ्रेम स्वयं डिजाइन का एक अभिन्न अंग बन जाता है, और यह विभिन्न आकारों और रूपों में हो सकता है। पौधों को अक्सर फ्रेम के भीतर व्यवस्थित किया जाता है, या तो सीधे संरचना में लगाया जाता है या फ्रेम के भीतर कंटेनरों में रखा जाता है। बागवानी की यह तकनीक डिजाइन में रचनात्मकता की अनुमति देती है, जिससे बगीचों या दीवारों पर आकर्षक प्रदर्शन बनाना संभव हो जाता है।



ट्रेलिस सिस्टम

इस प्रणाली में बेलदार पौधों को सहारे के माध्यम से ऊपर की ओर बढ़ाया जाता है। इसके लिए लकड़ी, लोहे या प्लास्टिक की जालियाँ उपयोग की जाती हैं। यह सूर्य के प्रकाश के अधिकतम उपयोग में सहायक होती है और पौधों की देखभाल को आसान बनाती है। ट्रेलिस प्रणालियाँ बेलों को ऊपर की ओर बढ़ने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, जिससे वायु प्रवाह बेहतर होता है।



पौधों के स्वास्थ्य हेतु आवश्यक बिंदु

- घर के बाहर की दीवारों पर ऊर्ध्वाधर बागवानी में लगाए गए पौधों को तेज धूप और प्रदूषण से बचाएं।
- घर के अंदर रखे जाने वाले पौधों को अंधेरे कमरे में तेज एयर कंडीशनर के साथ रखने से बचें,क्योंकि ऐसे कमरों में पौधे ज्यादा समय तक जीवित नहीं रह पाएंगे।
- उनकी नमी सूख जाती है। इस वजह से पौधों को ठीक से बढ़ने में दिक्कत होती है। हालांकि, पौधे को कितनी धूप और पानी की ज़रूरत होती है, यह उसकी दिशा, स्थान, मौसम और प्रकार पर निर्भर करता है। फिर भी, पौधे को हर दो दिन में कम से कम एक बार ज़रूर पानी दें। कीटनाशक का सही मात्रा में इस्तेमाल करना ज़रूरी है।
- खाद को समय-समय पर बदलते रहें, इससे पुरानी खाद के कारण पौधों में होने वाली बीमारियों को रोका जा सकता है।
- पौधों के अच्छे स्वास्थ्य के लिए गमलों में मिट्टी, कोकोपीट आदि जैसी आवश्यक सामग्री डालें। इससे पौधों को आवश्यक पोषक तत्व मिल सकेंगे।

निष्कर्ष

इस लेख में वर्टिकल गार्डनिंग के बहुआयामी लाभों पर प्रकाश डाला गया है। यह सीमित स्थान का अधिकतम उपयोग, सौंदर्य वृद्धि, पर्यावरण संरक्षण एवं सामाजिक सहभागिता को बढ़ावा देती है। यद्यपि इसमें सिंचाई एवं पौध चयन जैसी कुछ चुनौतियाँ होती हैं, फिर भी यह शहरी क्षेत्रों के लिए एक सतत् एवं प्रभावी समाधान है। अतः वर्टिकल गार्डनिंग को अपनाकर हम एक हरित, स्वच्छ एवं सतत् भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठा सकते हैं।

खरीफ सब्जियों में रोग एवं कीट प्रबंधन

राज किरण [1], प्रज्ञा रंजन [1], संगीता पांडे [1], पूजा कुमारी [1], मुकेश कुमार खोखर [2] एवं लिकोन आचार्य [2]

[1] भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली
[2] भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय समेकित नशीजीव प्रबंधन अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

उत्तर भारत में मानसून के आगमन (जून–जुलाई) के साथ खरीफ मौसम की शुरूआत होती है। इस दौरान टमाटर, मिर्च, भिंडी, बैंगन तथा कद्दूवर्गीय सब्जियाँ जैसे लौकी, करेला, तोरई, कद्दू और खीरा प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। इस मौसम में तापमान एवं आर्द्रता में उतार-चढ़ाव के कारण फफूंदजनित, विषाणुजनित एवं मृदाजनित रोगों का प्रकोप तेजी से बढ़ता है। विशेषकर डैम्पिंग-ऑफ, मृदुरोमिल आसिता, चूर्णिल आसिता, फ्यूजेरियम विल्ट तथा विषाणुजनित रोग जैसे मोजेक एवं लीफ कर्ल रोग गंभीर समस्या उत्पन्न करते हैं। वहीं दूसरी ओर रस चूसने वाले कीट जैसे एफिड, थ्रिप्स, सफेद मक्खी एवं माइट्स तथा फल एवं पत्तियों को नुकसान पहुँचाने वाले कीट जैसे फल छेदक एवं लाल कद्दू भृंग फसल को आर्थिक स्तर पर प्रभावित करते हैं। यदि इन कीटों एवं रोगों का प्रारंभिक अवस्था में ही प्रबंधन नहीं किया जाए, तो उपज में भारी गिरावट के साथ-साथ बाजार योग्य उत्पाद की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। इसलिए खरीफ सब्जी उत्पादन में नियमित निगरानी, समय पर पहचान तथा कीट एवं रोग प्रबंधन तकनीकों का अपनाना अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिससे सतत् एवं लाभकारी उत्पादन सुनिश्चित किया जा सके।

1. सब्जियों का आद्र गलन रोग

यह सब्जियों की नर्सरी की एक प्रमुख बीमारी है, जो बीज एवं मिट्टी में उपस्थित रोगजनकों द्वारा फैलती है। रोगग्रस्त पौधों का तना भूमि सतह के पास गलकर पतला हो जाता है और पौधे गिरकर मर जाते हैं।

प्रबंधन:

- हमेशा प्रमाणित, स्वस्थ एवं रोगमुक्त बीज का ही उपयोग करें।
- बीजों का उपचार *ट्राइकोडर्मा विरिडे/ट्राइकोडर्मा हार्जियानम* (@ 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से करें।
- नर्सरी की क्यारियाँ भूमि सतह से 15–20 से.मी. ऊँची बनाएं तथा जल निकास की उचित व्यवस्था रखें, जिससे आद्र गलन जैसी बीमारियों का प्रकोप कम हो।
- पौधशाला में उचित दूरी बनाए रखें तथा पौधों की अत्यधिक सघनता से बचें, ताकि वायु संचार बना रहे और रोग ज्यादा न बढ़ सके।

2. टमाटर का अगेती झुलसा एवं पछेती झुलसा

अगेती झुलसा रोग सामान्यतः गर्म एवं आर्द्र मौसम में दिखाई देता है। इस रोग मे पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे बनते हैं जिनमें संकेन्द्रित वलय दिखाई देते हैं। रोग के बढ़ने पर पत्तियाँ पीली होकर गिर जाती हैं। जबकि पछेती झुलसा रोग समान्यतः बरसात के मौसम में आता है तथा यह रोग तेजी से फैलता है। पत्तियों एवं फलों पर भूरे-काले धब्बे बनते हैं तथा अधिक आर्द्रता में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफूंदी दिखाई देती है।

प्रबंधन:

- रोगमुक्त बीज एवं स्वस्थ पौधों का उपयोग करें।
- खेत में उचित वायु संचार बनाए रखें एवं जलभराव न होने दें।
- रोगग्रस्त पौधों को हटाकर नष्ट करें।
- रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर मैन्कोजेब 75 WP @ 2.5–3.0 ग्राम प्रति लीटर पानी अथवा मेटालेक्सिल 8% + मैन्कोजेब 64% WP @ 2.0–2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 10–15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

3. टमाटर फल छेदक एवं तंबाकू की इल्ली

फल छेदक टमाटर का सबसे विनाशकारी कीट माना जाता है। इसकी सूंडियाँ फलों में छेद करके अंदर का गूदा खाती हैं तथा अक्सर शरीर का पिछला भाग फल के बाहर दिखाई देता है। एक ही सूंडी कई फलों को नुकसान पहुंचा सकती है। इस कीट की इल्लियाँ पत्तियों, नई कोंपलों एवं फलों को खाकर भारी नुकसान पहुँचाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पौधे लगभग पत्तीविहीन हो जाते हैं।

प्रबंधन:

- टमाटर की प्रत्येक 16 कतारों के बाद एक कतार गेंदे की ट्रैप फसल लगाएं।
- संक्रमित फलों को एकत्रित कर नष्ट करें एवं प्रभावित पौधों को खेत से हटाकर नष्ट करें।
- प्रति हेक्टेयर 5–10 फेरोमोन ट्रैप लगाकर निगरानी करें।
- नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500 पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव इल्ली के प्रारंभिक प्रकोप पर करें।

4. टमाटर, मिर्च एवं भिंडी की सफेद मक्खी

सफेद मक्खी टमाटर, मिर्च एवं भिंडी की एक प्रमुख रस-चूसक कीट है। इसके शिशु (निम्फ) एवं वयस्क पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं, जिससे पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं। कीट द्वारा उत्सर्जित मधुरस (हनीड्यू) पर काली फफूंद (सूटी मोल्ड) विकसित हो जाती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया प्रभावित होती है। यह कीट टमाटर एवं मिर्च में पर्णकुंचन (लीफ कर्ल) तथा भिंडी में पीला शिरा मोजेक जैसे विषाणु रोगों का प्रमुख वाहक है।

प्रबंधन:

- रोपाई से पूर्व पौधों की जड़ों को इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL @ 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल में 20–30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें।
- नर्सरी को 40–50 मैश नायलॉन नेट से सुरक्षित रखें।
- सफेद मक्खी की निगरानी के लिए 20–25 पीले चिपचिपे ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाएं।
- कीट के प्रारंभिक प्रकोप पर नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500 पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

5. टमाटर एवं मिर्च में पर्णकुंचन (लीफ कर्ल)

टमाटर एवं मिर्च में पर्णकुंचन (लीफ कर्ल) रोग के प्रारंभिक लक्षण नई पत्तियों पर दिखाई देते हैं, जहाँ पत्तियाँ मुड़कर सिकुड़ जाती हैं तथा उनका आकार छोटा हो जाता है। संक्रमित पत्तियाँ मोटी, विकृत एवं चमड़े जैसी दिखाई देती हैं। पौधों की वृद्धि रुक जाती है और वे बौने रह जाते हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में पौधे झाड़ीदार (बुशी) दिखाई देते हैं तथा उनमें फूल एवं फल कम लगते हैं। टमाटर में पत्तियाँ प्रायः ऊपर की ओर मुड़ती हैं, जबकि मिर्च में पत्तियाँ ऊपर या नीचे दोनों दिशाओं में मुड़ सकती हैं। रोग के अधिक प्रकोप से पौधों की उत्पादन क्षमता में भारी कमी आ जाती है।

प्रबंधन:

- रोगग्रस्त पौधों को प्रारंभिक अवस्था में उखाड़कर नष्ट करें।
- रोग सहनशील अथवा प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें, जहाँ उपलब्ध हों।
- फसल चक्र अपनाएँ तथा लगातार एक ही कुल की फसलें न उगाएँ।
- संतुलित उर्वरक प्रबंधन अपनाएँ तथा नाइट्रोजन का अत्यधिक प्रयोग न करें।
- रोग के वाहक सफेद मक्खी की संख्या कम रखने के लिए नियमित निगरानी एवं समुचित प्रबंधन करें।

6. भिंडी का पीला शिरा मोजेक रोग

रोगग्रस्त भिंडी के पौधों की पत्तियों की शिराएँ पीली पड़ जाती हैं, तथा पौधों की वृद्धि रुक जाती है। रोग के अधिक बढ़ने पर फल ज्यादा नहीं बनते हैं। भिंडी का पीला शिरा मोजेक मुख्यतः सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

प्रबंधन:

- पीला शिरा मोजेक एवं लघुपर्ण रोग के प्रति सहनशील/प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।
- रोगग्रस्त पौधों को प्रारंभिक अवस्था में ही उखाड़कर खेत से बाहर नष्ट कर दें, ताकि रोग का प्रसार न हो।
- सफेद मक्खी की निगरानी एवं नियंत्रण करे।

7. बैंगन का फोमोप्सिस झुलसा एवं फल सड़न

यह बैंगन का प्रमुख रोग है। रोग की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों पर छोटे भूरे धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में बढ़कर बड़े आकार के हो जाते हैं। संक्रमित फलों पर धँसे हुए भूरे धब्बे विकसित होते हैं और धीरे-धीरे फल सड़ने लगते हैं।

प्रबंधन:

- रोगमुक्त, प्रमाणित एवं उपचारित बीज का ही उपयोग करें तथा बीजोपचार ट्राइकोडर्मा अथवा अनुशंसित फफूंदनाशी से करें।
- संक्रमित फलों, पत्तियों एवं अन्य रोगग्रस्त पौध भागों को समय-समय पर एकत्रित कर नष्ट करें, ताकि रोग फैल न सके।
- पौधों के बीच उचित दूरी बनाए रखें तथा खेत में पर्याप्त वायु संचार की व्यवस्था रखें।
- खेत में जलभराव न होने दें और संतुलित पोषण प्रबंधन अपनाएं।
- रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर मैन्कोजेब 75 WP @ 2.5–3.0 ग्राम प्रति लीटर पानी अथवा कार्बेन्डाजिम 50 WP @ 1.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 10–15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

8. बैंगन का तना एवं फल छेदक

बैंगन का तना एवं फल छेदक तथा भिंडी का फल छेदक अत्यंत हानिकारक कीट हैं। इनकी सूंडियाँ तनों एवं फलों में छेद करके अंदर का भाग खाती हैं, जिससे फल बाजार योग्य नहीं रह जाते।

प्रबंधन:

- संक्रमित तनों एवं फलों को नियमित रूप से तोड़कर खेत से बाहर नष्ट करें, जिससे कीट की संख्या और इनके प्रसार को कम किया जा सके।

- कीट की निगरानी एवं नर पतंगों को आकर्षित कर नियंत्रण हेतु प्रति हेक्टेयर 10–12 फेरोमोन ट्रैप लगाएं तथा समय-समय पर ल्योर बदलते रहें।
- प्रारंभिक अवस्था में नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500 पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- जैविक नियंत्रण हेतु *बैसिलस थुरिन्जिएन्सिस* (BT) @ 1–2 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- अधिक प्रकोप की स्थिति में एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 SG @ 0.4 ग्राम प्रति लीटर अथवा स्पिनोसैड 45 SC @ 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- फसल की नियमित निगरानी करें तथा कीट के प्रारंभिक प्रकोप पर ही नियंत्रण उपाय अपनाएं।

9. कद्दूवर्गीय सब्जियों का मृदुरोमिल आसिता एवं चूर्णिल आसिता

मृदुरोमिल आसिता में पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले धब्बे तथा निचली सतह पर धूसर फफूंदी दिखाई देती है। चूर्णिल आसिता में पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा आवरण विकसित हो जाता है।

प्रबंधन:

- पौधों के बीच उचित दूरी बनाए रखें तथा खेत में पर्याप्त वायु संचार सुनिश्चित करें, जिससे आर्द्रता कम रहे और रोग का प्रसार न हो।
- रोगग्रस्त पत्तियों एवं पौध भागों को समय-समय पर हटाकर नष्ट करें।
- मृदुरोमिल आसिता के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर मेटालेक्सिल 8% + मैन्कोजेब 64% WP @ 2.0–2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी अथवा मैन्कोजेब 75 WP @ 2.5–3.0 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- चूर्णिल आसिता के नियंत्रण हेतु घुलनशील गंधक 80 WP @ 2–3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- आवश्यकता होने पर 10–15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

10. कद्दूवर्गीय सब्जियों की उकठा रोग एवं जड़ सड़न

इस रोग में पौधे धीरे-धीरे पीले पड़कर मुरझाने लगते हैं तथा अंततः सूख जाते हैं। रोगग्रस्त पौधों की जड़ों एवं तने के आधार भाग में सड़न दिखाई देती है।

प्रबंधन:

- बीजों का उपचार *ट्राइकोडर्मा विरिडे/ट्राइकोडर्मा हार्जियानम* @ 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें, जिससे मृदाजनित रोग कम हो।
- रोगग्रस्त पौधों को जड़ों सहित उखाड़कर खेत से बाहर नष्ट करें, ताकि रोग का प्रसार अन्य पौधों तक न हो।
- फसल चक्र अपनाएं तथा लगातार एक ही खेत में कद्दूवर्गीय फसलों की खेती से बचें।
- रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम 50 WP @ 1 ग्राम प्रति लीटर पानी अथवा कार्बेन्डाजिम + मैन्कोजेब @ 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल से पौधों के जड़ क्षेत्र (रूट जोन) में ड्रेंचिंग करें।
- जैविक प्रबंधन हेतु ट्राइकोडर्मा युक्त गोबर की खाद या कम्पोस्ट @ 2.5–5 किग्रा प्रति हेक्टेयर खेत में मिलाएं।

11. कद्दूवर्गीय सब्जियों की फल मक्खी

फल मक्खी करेला, लौकी, तोरई एवं अन्य कद्दूवर्गीय सब्जियों का सबसे विनाशकारी कीट है। मादा मक्खी कोमल फलों में अंडे देती है तथा उनसे निकलने वाले मैगट फलों के अंदर का गूदा खाते हैं। प्रभावित फल टेढ़े-मेढ़े हो जाते हैं तथा समय से पहले सड़कर गिर जाते हैं।

प्रबंधन:

- संक्रमित एवं गिरे हुए फलों को नियमित रूप से एकत्रित कर नष्ट करें, ताकि फल मक्खी के जीवन चक्र को तोड़ा जा सके।
- नर फल मक्खियों को आकर्षित कर उनकी संख्या कम करने हेतु मिथाइल यूजेनॉल ट्रैप 20–25 प्रति हेक्टेयर की दर से लगाएं तथा समय-समय पर ल्योर बदलते रहें।
- फल बनने की अवस्था में फलों की नियमित तुड़ाई करें और अधिक पके फलों को खेत में न रहने दें।
- प्रारंभिक प्रकोप की स्थिति में नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500 पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- अधिक प्रकोप होने पर अनुशंसित कीटनाशियों जैसे स्पिनोसैड 45 SC @ 0.3 मि.ली. प्रति लीटर पानी अथवा अन्य अनुशंसित कीटनाशी का प्रयोग करें।

12. कद्दूवर्गीय सब्जियों मे लाल कद्दू भृंग

लाल कद्दू भृंग कद्दूवर्गीय सब्जियों के अंकुरित पौधों, पत्तियों एवं कोमल भागों को खाकर नुकसान पहुँचाता है। वयस्क भृंग पत्तियों में अनियमित छेद बना देते हैं, जिससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता कम हो जाती है। अधिक प्रकोप की स्थिति में नवांकुर एवं छोटे पौधे पूरी तरह नष्ट हो सकते हैं, जिससे पौधों की संख्या तथा उपज प्रभावित होती है।

प्रबंधन:

- प्रारंभिक अवस्था में लाल कद्दू भृंग के वयस्कों एवं अंडों को हाथ से एकत्रित कर नष्ट करें।
- नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500

पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

- मानसून की प्रारंभिक वर्षा के बाद वयस्क भृंगों को एकत्रित कर नष्ट करें।
- अधिक प्रकोप होने पर लैम्ब्डा-सायहेलोथ्रिन 5 EC @ 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी अथवा साइपरमेथ्रिन 25 EC @ 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

13. कद्दूवर्गीय सब्जियों मे एफिड (माहू) एवं सफेद मक्खी

एफीड एवं सफेद मक्खी पत्तियों तथा कोमल भागों से रस चूसकर पौधों को कमजोर बनाते हैं। इनके प्रकोप से पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं, मुड़ जाती हैं तथा पौधों की वृद्धि रुक जाती है। ये कीट मधुरस (हनीड्यू) का स्राव करते हैं, जिस पर काली फफूंदी विकसित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, ये अनेक विषाणु जनित रोगों के वाहक होते हैं, जिससे फसल को गंभीर क्षति पहुँचती है।

प्रबंधन:

- माहू एवं सफेद मक्खी की निगरानी एवं नियंत्रण के लिए 20–25 पीले चिपचिपे (Yellow Sticky) ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाएं।
- फसल की नियमित निगरानी करें तथा प्रारंभिक प्रकोप पर नियंत्रण उपाय अपनाएं।
- नीम बीज अर्क (NSKE) 5% अथवा एजाडिरैक्टिन 1500 पीपीएम @ 3–5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- अधिक प्रकोप की स्थिति में इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL @ 0.3 मि.ली. प्रति लीटर अथवा थियामेथोक्साम 25 WG @ 0.25 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

जैविक खाद बनाने की उन्नत तकनीकी

शिवा धर एवं रणबीर सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

भारत में सदियों से विभिन्न जैविक खादें जैसे; गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद आदि का प्रयोग विभिन्न फसलों में किया जाता रहा है। वर्तमान में रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस दुष्प्रभाव को कम करने के लिए रासायनिक खादों के साथ-साथ जैविक खादों का उपयोग करने से मृदा उत्पादन क्षमता को बनाए रखा जा सकता है। जैविक खेती के लिए जैविक खादों का प्रयोग अति आवश्यक है, क्योंकि जैविक कृषि में रासायनिक खादों का प्रयोग वर्जित है। ऐसी स्थिति में पौधों को पोषक तत्व की पूर्ति के लिए जैविक खादों, हरी खाद व फसल चक्र अपनाना आवश्यक है।

जैविक खादों का उत्पादन एक घरेलू, व्यवसाय बन रहा है, इसके द्वारा कम निवेश या पूंजी से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस उद्देश्य हेतु उत्पादन तकनीकों की जानकारी होना आवश्यक है। फसलों के अवशेष, घास-फूस, वृक्षों की पत्तियां, पशुओं का मल-मूत्र, मृत जीव-जन्तु, कार्बनिक अपशिष्ट जीवांश, आदि कार्बनिक पदार्थ कहलाते हैं। उचित मृदा नमी में सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा अपशिष्ट पदार्थ सड़-गल जाते हैं तथा इससे जीवांश कार्बन प्राप्त होता है।

जैविक कम्पोस्ट व खादों को बनाने में प्रयुक्त सामग्री

खेती बागवानी, पशुपालन तथा घरेलू क्रियाकलापों से उत्पादित सभी व्यर्थ पदार्थ जैविक कम्पोस्ट बनाने में प्रयोग किये जाते हैं। उदारणार्थः-

- कृषि अवशेष जैसे धान, गेहूँ, सोयाबीन, मक्का, बाजरा, लोबिया, मसूर आदि की पत्तियाँ, पुआल, भूसा, फार्म अवशिष्ट, सब्जी उद्यान से प्राप्त अवशेष एवं खरपतवार इत्यादि।
- पार्क एवं लॉन से निकली घास, खरपतवार, पेड़-पौधों की कटाई-छटाई से प्राप्त वनस्पतियाँ एवं पत्तियाँ इत्यादि।
- पशुपालन से प्राप्त गोबर, मूत्र, बिछावन एवं सड़ा-गला चारा इत्यादि।
- सभी प्रकार से सड़ने योग्य वानस्पतिक पदार्थ जो कि खेत, पार्क, लान, आदि में पैदा होते हैं।

जैविक खाद बनाने की विधियाँ

जैविक खाद बनाने की मुख्यतः दो विधियां होती हैं-वायवीय तथा अवायवीय। इनमें अवायवीय विधि धीमी तथा गड्ढ़े में बनाई जाती है। वायवीय विधि में मुख्यतः समतल सतह पर पंक्तियों में ढेर बनाकर उनमें वायु का संचार किया जाता है।

वायवीय विधि से कम्पोस्ट बनाने की विन्ड रो तकनीक

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली द्वारा कृषि अवशेषों तथा अन्य सड़ने वाले अवशेषों का उपयोग कर, कम समय एवं लागत में अधिक गुणवत्ता वाली कम्पोस्ट बनाने की विन्ड रो विधि विकसित की गई है। यह विधि सभी स्तरों पर बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

विन्ड रो विधि में प्रयुक्त सामग्रीः खेतों से प्राप्त सभी फसलों के अवशेष, पत्तियों, घास-फूस, पशुओं का मल-मूत्र एवं बिछावन, चारे के अवशेष, फल-सब्जियों के छिलके, हरियाली पार्क एवं बाग-बगीचों की कटाई-छंटाई के अवशेष, पतझड़ से प्राप्त पत्तियां, फूल आदि कम्पोस्ट के लिए प्रयुक्त होते हैं। न सड़ने वाले पदार्थ जैसे; प्लास्टिक, रबर, धातु, पॉलीथीन, कांच इत्यादि को प्रारम्भ से ही अलग कर दिया जाता हैं।

विन्ड रो विधि में प्रयुक्त मशीन एवं यंत्रः छोटे स्तर पर कम मात्रा में कम्पोस्ट बनाने के लिए फावड़ा, तसला, टोकरी, रेक इत्यादि से काम चल जाता है। बड़े पैमाने पर श्रम एवं समय की बचत के लिए टैक्टर, चालित मशीनें भी उपयोग की जाती है। इन मशीनों से पलटाई तथा सभी पदार्थों को सुचारू रूप से मिलाने के लिए 'कम्पोस्ट टर्नर कम मिक्सर' मशीन तथा कच्चे एवं तैयार पदार्थों को यथा-स्थान रखने एवं ट्रक आदि में भरने हेतु 'लोडर' बड़े आकार की शाखाओं को वांछित आकार या छोटा करने हेतु 'श्रेडर' तथा तैयार खाद को छानने हेतु विभिन्न क्षमता वाली 'छनाई मशीनों' की आवश्यकता होती है।

जैविक खाद तैयार करने के विभिन्न चरण

1. सर्वप्रथम फसल अवशेषों को लम्बाई में ढेर (विन्ड रो) बनाया जाता है। इसकी ऊँचाई व चौड़ाई 2.0 से 2.5 मी. तथा लम्बाई उपलब्ध जगह के अनुसार 10 से 100 मीटर या उससे अधिक रखी जाती है। इस सामग्री में भार के आधार पर 80 प्रतिशत

फसल अवशेष तथा 20 प्रतिशत ताजा गोबर मिला सकते हैं। यदि गोबर उपलब्ध न हो तो भी खाद को आसानी से बना सकते हैं। धान अथवा अन्य फसलें जैसे; कपास, अरहर आदि के अवशेषों को श्रेडर मशीन द्वारा 8 से 10 सें.मी. छोटा कर लेते हैं।

2. इन विन्ड रो पर सूक्ष्मजीवीय कल्चर के चूर्ण या द्रव का छिड़काव किया जाता है। यह कल्चर आजकल सरकारी संस्थानों तथा प्राइवेट एजेंसियों पर भी मिल जाता है।

3. कल्चर डालने के तुरन्त बाद पहली पलटाई करते हैं, जिससे कल्चर सभी पदार्थों में अच्छे से मिल जायें। द्वितीय पलटाई 10 दिन बाद, तीसरी 25 दिन बाद, चौथी 40 दिन बाद तथा पांचवीं 55-60 दिन पर करते हैं। पलटाइयों का अन्तर तथा संख्या विभिन्न प्रकार के अवशेषों के आधार पर कम या अधिक हो सकती है।

4. विभिन्न पलटाइयों के बीच समय-समय पर विन्ड रो में नमी का स्तर ज्यादा बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करते हैं तथा विन्ड रो के आकार को सही करते हैं।

5. प्रयुक्त सामग्री के अनुसार 60 से 70 दिन में कम्पोस्ट खेत में डालने के लिए तैयार हो जाता है। यादि कम्पोस्ट को तुरन्त प्रयोग न करना हो तो बड़े आकार के ढेर बनाकर तथा ढक कर रखा जा सकता है। इससे पोषक तत्वों का ह्रास कम होता है।

तैयार कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा कम्पोस्ट बनाने में प्रयुक्त पदार्थों पर निर्भर करती है। इस प्रकार से तैयार कम्पोस्ट में गोबर की खाद की तुलना में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। यह कम्पोस्ट संतुलित तत्वों से परिपूर्ण एक उत्कृष्ट मृदा सुधारक होता है। यह भूमि में जीवांश की मात्रा को बढ़ाकर जैविक एवं भौतिक दशा को सुधारकर भूमि को उर्वर बनाती है। इससे खेत, पार्क, उद्यान तथा संस्थान के परिसरों आदि स्थानों पर सड़ने योग्य कूड़े-कचरे से बहुमूल्य खाद बनाई जा सकती है। इस प्रकार बहुमूल्य खाद बनाने के साथ-साथ वातावरण को स्वच्छ रखने में सहायता मिलती है।

जैविक खादों के प्रकार

1. **कम्पोस्टः** कूड़ा-कचरा, मृदा, राख, भूसा, बचा हुआ चारा, पौधों के डंठल, पुआल, घास, सूखी सब्जियों के के पत्ते खरपतवार जिनमें बीज ना बना हो, जड़े, गौशाला का चारा व पशुओं तथा मानव के मल-मूत्र को मिला कर व सड़ा-गला कर तैयार किए गए खाद को कम्पोस्ट खाद कहते हैं। कम्पोस्ट बनाने की प्रक्रिया के अंतर्गत जैविक अपशिष्ट को जैविक खाद में बदल दिया जाता है।

2. **कम्पोस्ट खाद तैयार करने की विधिः** कम्पोस्ट खाद तैयार करने के लिए हवादार (एयरोबिक) तथा बिना हवादार (ऐनएयरोबिक) दोनों ढंग काम में लिए जाते हैं। हवादार विधि में एक ढ़ेर के रूप में तथा बिना हवादार में खाद गड्ढ़ों में तैयार की जाती है। ढ़ेर के रूप में तैयार करने के लिए सड़ाने वाले जीवाणुओं को खुली हवा या ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इसलिए इस विधि को एयरोबिक कहते हैं।

3. **गोबर की खाद (एफ. वाई. एम.):** गोबर की खाद (फार्म यार्ड मैन्योर) सर्वश्रेष्ठ तथा सबसे अधिक मात्रा में प्रयोग होने वाली जैविक खाद है। गोबर की खाद को पशुओं, जैसे; गाय, भैंस, घोड़ा, सूअरों, मुर्गी एवं बत्तख इत्यादि के ठोस तथा द्रव मलमूत्र को किसी पोषक पदार्थों से साधारणतः बिछावन, भूसा, पुआल, पेड़-पौधों की पत्तियाँ, रेत व लकड़ी का बुरादा आदि से मिलाकर तैयार करते हैं अथवा उपलब्ध गोबर व कृषि अवशेष से लम्बाई में ढेर बनाकर 2 से 3 बार पलटाई करके उत्तम खाद तैयार कर सकते हैं। यह खाद सर्वाधिक प्रचलित खादों में से एक है। परम्परागत खाद तैयार करने में 5 से 8 माह का समय लगता है। लेकिन एरोबिक विधि से खाद 30 से 35 दिनों में तैयार हो जाती है। इस विधि से खाद में खरपतवारों के बीज नष्ट हो जाते हैं तथा खाद में दीमक भी नहीं लगती। उचित मात्रा में तापमान व नमी मिलने से सूक्ष्मजीवाणुओं की सक्रियता पुरानी विधि की तुलना में तीव्र रहती है। अच्छी तरह से गलने व सड़ने के कारण पोषक तत्व शीघ्र व संतुलित मात्रा में फसल को प्राप्त होते हैं। सही रूप से तैयार खाद में नत्रजन 0.4-0.6, फॉस्फोरस 0.2-0.4 प्रतिशत, पोटाश की मात्रा 0. 5-0.9 प्रतिशत व अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व भी उचित मात्रा में पाये जाते हैं। गोबर की खाद, फसल के लिए पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण और बेहतर स्रोत है।

4. **फसल अवशेष खादः** इस खाद को विभिन्न फसलों के अवशेष को मिलाकर अथवा एक-एक फसल अवशेष के अलग-अलग खाद तैयार की जाती है। इस प्रकार की खाद में विभिन्न अनुपातों में गोबर तथा फसल अवशेष मिलाकर खाद बनाई जाती है।

5. **पत्तियों की खादः** विभिन्न पेड़-पौधों की पत्तियाँ, कटाई-छटाई से प्राप्त छोटी-मोटी टहनीयां आदि से खाद बनाई जाती है। इस प्रकार की खाद नर्सरी तथा गमलों में लगे पौधों के लिए उत्तम होती है।

6. **केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट):** जैव पदार्थ उपयोग इकाई में केंचुआ खाद बनाने की सस्ती तथा आसान विधियां विकसित की गई है, वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए किसी भी प्रकार के पात्र जैसे; मिट्टी के बर्तन, वर्मी बैग, लकड़ी के बक्से इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया का भूमि में गड्ढ़े (पिट) बना कर या क्यारी (कम्पोस्टिंग बेड) बना कर भी किया जा सकता है। गड्ढ़े या क्यारी की चौड़ाई 1.0 मीटर रखी जाती है तथा इसकी लंबाई स्थान की उपलब्धता के अनुसार

होती है। इसके पश्चात् उपरोक्त पिट या बेड पर एक हजार केंचुए प्रति वर्ग मीटर की दर से ऊपरी सतह पर छोड़कर बोरी, टाट या भूसे से ढक देते हैं। इन बोरियों, घास या भूसे पर पानी छिड़कते रहें ताकि नमी का स्तर 40 से 60 प्रतिशत तक बना रहे। केंचुए की खाद बनाने हेतु कम लागत से बेड बनाने की कई विधियाँ विकसित की गई हैं। इनमें खुली ईंट से बनी बेड की लागत पक्की नाली की लगभग 1/10 आती है। इसके अलावा ईंटों की जगह हम फसल अवशेषों का घेरा बनाकर वर्मीबेड बना सकते हैं। केंचुओं को तैयार खाद से अलग करने में काफी श्रमिक लगते हैं। जैव पदार्थ द्वारा विकसित उपयोग इकाई स्थान परिवर्तन विधि से इस लागत को कम किया गया है।

जैविक खादें, जैविक पदार्थों से बनाई जाती हैं, ये खादें पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में मदद करती हैं व मृदा उर्वरता बढ़ाती है, जैविक खादों से मृदा नमी को लम्बे समय तक संरक्षित रखा जा सकता है, साथ ही मृदा कटाव को भी कम किया जा सकता है। प्रकृति में पाये जाने वाले तथा कृषि क्रियाओं में उत्सर्जित कार्बनिक अपशिष्टों को खेतों में सही विधि एवं समय से प्रयोग करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त खादें, मृदा तापमान स्थिर रखने तथा नमी बनाये रखने में सहायता करती है। यह मृदा में उच्च कार्बनयुक्त पदार्थों को बनाये रखने में भी सहायक है। अतः जैव पदार्थ उपयोग इकाई में विकसित विभिन्न विधियों से हम भरपूर गुणवत्ता वाली खादें सुगमता से बनाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं तथा पर्यावरण को भी संरक्षित रख सकते हैं।

गमलों में जैविक खेती

रणबीर सिंह एवं आर.एस. बाना
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

कृषि मानव सभ्यता का मूल आधार है। यह न केवल भोजन और पोषण का स्रोत है, बल्कि आर्थिक स्थिरता और सांस्कृतिक धरोहरों का भी एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। आधुनिक कृषि तकनीकों ने खेती के तरीकों को एक नए आयाम तक पहुँचाया है। इनमें से एक नवीनतम और प्रभावशाली तकनीक है, कंटेनर खेती। कंटेनर खेती एक उभरती हुई विधि है, जो पारम्परिक खेती की सीमाओं से परे जाकर, छोटे स्थानों में, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में, अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने में सहायक है।



कंटेनर खेती का अर्थ



कंटेनर खेती एक खेती की उन्नत तकनीक है, जिसमें पौधों को उर्वर मृदा के मिश्रण में गमलों या छोटे पात्रों या कंटेनरों में उगाया जाता है। इन कंटेनरों को किसी भी भवनों या इमारतों की छत, बालकनी, आंगन या यहाँ तक कि इनडोर स्थानों में भी पर रखा जा सकता है। इस प्रकार की खेती में सामान्यतः हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाता है, जिससे जल और पोषक तत्वों की बचत होती है और इसमें उर्वर मृदा के साथ जैविक खादों का उपयोग किया जाता है।

कंटेनर बागवानीः बागवानी का यह एक कम खर्चीला और अत्यधिक लचीला रूप है, जो उपलब्ध छत संरचना में बहुत कम या बिना किसी बदलाव के शहरों के लिए विशेष रूप से प्रभावी है। कंटेनरों का प्लास्टिक के ड्रम, बाल्टियों, मृदा के बर्तनों, सीमेंट की थैलियों, भण्डारण कंटेनर, लकड़ों के बक्सों से लेकर कई तरह की सामग्रियों से बनाया जा सकता है, जो घर में आसानी से उपलब्ध हों।

गमलों के प्रकार

1. **मिट्टी के गमलेंः** ये गमले मिट्टी के बने होते हैं और और पौधें के लिए उपयुक्त जल निकासी प्रदान करते हैं।
2. **प्लास्टिक के गमलेः** यह हल्के और सस्ते होते हैं और विभिन्न रंगों और आकारों में उपलब्ध होते हैं।
3. **सिरेमिक गमलेः** यह सजावट के लिए आकर्षक होते हैं, लेकिन अपेक्षाकृत भारी होते हैं।
4. **ग्रोबैग्सः** यह गमले कपड़े से बने होते हैं और हल्के होते हैं, जड़ों करे अच्छे से फैलने और जल निकासी में मदद करते हैं।
5. **हैंगिंग बास्केटः** यह एक लटकलने वाली टोकरी होती है, जिसका उपयोग कम स्थान में पौधे उगाने के लिए उपयुक्त है, विशेषकर फलों और छोटी सब्जियों के लिए उपयोग किया जाता है।
6. **उठे हुए बेडः** यह छोटे से उठे हुए खेत होते हैं, जो छत पर बनाए जा सकते हैं। इनमें सब्जियों और अन्य पौधे उगाने के लिए अधिक मिट्टी और संरचना मिलती है।

कंटेनर या गमलों में खेती के उपाय

1. **गमलों का चयनः** गमलों का सही चयन करना महत्वपूर्ण है। यह उपयुक्त आकार, गहराई और निकास द्वार के साथ होना चाहिए।
2. **अच्छी मिट्टीः** अच्छी गुणवत्ता वाली मृदा का उपयोग करें, जो फसलों के लिए उपयुक्त हो।
3. **समय पर सिंचाईः** गमलों में फसलों के लिए समय पर सिंचाई करना महत्वपूर्ण है, ताकि पौधे सही रूप से उग सकें।
4. **उत्पादित करने की देखभालः** पौधों को सही खाद, पानी और देखभाल प्रदान करना महत्वपूर्ण है, ताकि वे स्वस्थ रहें और अधिक उत्पादक हों।

कंटेनर या गमलों में कृषि के लिए उपयुक्त पौधे

1. **घासी या फलदार पौधेः** घासी और फलदार पौधे गमलों में कृषि के लिए अच्छे विकल्प होते हैं। इसमें मूली, गाजर, टमाटर, चुकंदर, प्याज, पत्तागोभी आदि शामिल हो सकते हैं।
2. **औषधीय पौधेः** कुछ औषधीय पौधे भी गमलों में कृषि के लिए उपयुक्त हो सकते हैं, जैसे की ट्यूलिप्स, मिर्च, तुलसी आदि।
3. **अन्य पौधेः** कुछ और पौधे भी गमलों में कृषि के लिए उपयुक्त हो सकते हैं, जैसे की सुगंधित पौधे, फूलों के पौधे।

कंटेनर खेती के लाभ

1. **स्थान की बचतः** कंटेनर खेती छोटे स्थानों में भी संभव है। यह शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए बहुत उपयोगी है, जहाँ खेती योग्य भूमि की कमी होती है।
2. **जल की बचतः** इस विधि में जल की बहुत कम आवश्यकता होती है। हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स में जल पुनर्चक्रण होता है, जिससे जल की बर्बादी नहीं होती।
3. **नियंत्रित पर्यावरणः** कंटेनरों में खेती करने से पर्यावरण को नियंत्रित करना आसान होता है। इससे मौसम और जलवायु पर निर्भरता कम होती है।
4. **कीटनाशक और रसायनों का कम उपयोगः** नियंत्रित वातावरण में कीट और रोगों का प्रकोप कम होता है, जिससे कीटनाशकों और रसायनों की आवश्यकता भी कम होती है।



5. **उच्च उत्पादनः** इस विधि में पौधों की वृद्धि दर अधिक होती है और उत्पादन भी पारम्परिक खेती की तुलना में बराबर होता है।
6. **उत्पादकताः** छोटे गमलों में खेती करने के लिए विशेष उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है, जिससे फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है।
7. **अनुकूलताः** भूमि पर खेती को गहरे नगरों में अनुकूलता का विकल्प प्रदान करता है, क्योंकि यह केवल छोटे विशेष रूप से उपयुक्त स्थानों पर भी किया जा सकता है।
8. **स्वयं की खेती का अवसरः** गमलों में खेती उन लोगों के लिए एक बड़ा अवसर हो सकता है, जो शहरी क्षेत्रों में रहते हैं और स्वयं की खेती करने के लिए समर्थ नहीं हैं।

कंटेनर खेती की चुनौतियाँ

1. **प्रारम्भिक लागतः** कंटेनर खेती के लिए आवश्यक संरचना और उपकरणों की लागत प्रारंभ में अधिक हो सकती है।
2. **तकनीकी ज्ञानः** इस विधि के लिए विशेष तकनीकी ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है, जो हर किसान के पास नहीं होता।
3. **निरंतर देखभालः** कंटेनर खेती में पौधों की निरंतर निगरानी और देखभाल की आवश्यकता होती है। पोषक तत्वों का सही मात्रा में देना और पानी की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करनी पड़ती है।

कंटेनर खेती के प्रकार

1. **हाइड्रोपोनिक्सः** इस प्रणाली में पौधे बिना मिट्टी के, पोषक तत्वों से युक्त पानी में उगाए जाते हैं। यह प्रणाली जल की बचत करती है और पौधों को आवश्यक पोषक तत्व सीधे प्रदान करती है।
2. **एयरोपोनिक्सः** इस प्रणाली में पौधों की जड़ों को हवा में निलंबित रखा जाता है और पोषक तत्वों का मिश्रण उनके ऊपर छिड़का जाता है। यह तकनीक जल और पोषक तत्वों के उपयोग को और अधिक प्रभावी बनाती है।
3. **वर्टिकल फार्मिंगः** इस प्रणाली में पौधों को ऊर्ध्वाधर संरचनाओं पर उगाया जाता है, जिससे भूमि का उपयोग अधिकतम होता है। यह शहरी क्षेत्रों में बहुत प्रभावी होती है।
4. **एक्वापोनिक्सः** इस प्रणाली में मछली पालन और पौधों की खेती एक साथ की जाती है। मछलियों के अपशिष्ट को पौधों के लिए पोषक तत्व के रूप में उपयोग किया जाता है, और पौधे जल को शुद्ध करते हैं जिससे मछलियों को स्वच्छ जल मिलता है।

कंटेनर खेती की आवश्यकताएं

1. **कंटेनरः** पौधों को उगाने के लिए सही प्रकार और आकार के कंटेनरों का चयन महत्वपूर्ण है। कंटेनर को इस तरह से डिजाइन किया जाना चाहिए कि वह जल निकासी और वायु संचार की सुविधा प्रदान कर सके।
2. **पोषक तत्व घोलः** हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स में उपयोग किए जाने वाले पोषक तत्व समाधान का सही मिश्रण तैयार करना आवश्यक है। इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम आदि का सही संतुलन होना चाहिए।
3. **प्रकाश व्यवस्थाः** पौधों की वृद्धि के लिए सूर्य प्रकाश आवश्यक होता है, लेकिन कंटेनर खेती में कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था का भी उपयोग किया जा सकता है। एलईडी लाइट्स और ग्रो लाइट्स पौधों की वृद्धि में सहायक होती हैं।
4. **जल प्रबंधनः** जल की नियमित और सही मात्रा में आपूर्ति कंटेनर खेती में बहुत महत्वपूर्ण होती है। इसके लिए ड्रिप इरिगेशन और अन्य जल प्रबंधन प्रणालियों का उपयोग किया जा सकता है।
5. **तापमान और आर्द्रता नियंत्रणः** कंटेनर खेती में तापमान और आर्द्रता का सही स्तर बनाए रखना आवश्यक है। इसके लिए हीटर, कूलर और ह्यूमिडिफायर का उपयोग किया जा सकता है।

भारत में कंटेनर खेती की स्थितिः भारत में कंटेनर खेती अभी अपने प्रारंभिक चरण में है, लेकिन इसका विस्तार तेजी से हो रहा है। शहरी क्षेत्रों में, विशेष रूप से महानगरों में, लोग इस तकनीक को अपनाने लगे हैं। बड़े शहरों में जहाँ भूमि और जल की कमी है, वहाँ कंटेनर खेती एक वरदान सिद्ध हो रही है। कई स्टार्टअप्स और कृषि उद्यम इस दिशा में काम कर रहे हैं और किसानों को आवश्यक प्रशिक्षण और उपकरण प्रदान कर रहे हैं।

उदाहरण और सफलता की कहानियाँ

1. **ग्रीन स्विगः** यह एक स्टार्टअप है जिसने हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स का उपयोग करके शहरी क्षेत्रों में ताजे सब्जियों

और फलों की खेती शुरू की है। उन्होंने कंटेनरों में खेती के माध्यम से अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया है और अपने उत्पाद सीधे उपभोक्ताओं तक पहुँचा रहे हैं।

2. **किसान एनजीओः** यह एक एनजीओ है जो ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों को कंटेनर खेती की तकनीक सिखा रहा है। उन्होंने कई गांवों में हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स प्रणालियों की स्थापना की है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि हुई है।
3. **अर्बन फार्मिंग पहलः** कई शहरी क्षेत्रों में लोग अपने घरों की छतों और बालकनी में कंटेनर खेती कर रहे हैं। इससे न केवल ताजा और जैविक उत्पाद प्राप्त हो रहे हैं, बल्कि शहरी लोगों में कृषि के प्रति जागरूकता भी बढ़ रही है।

सारणी 1. गमलों में पत्तेदार सब्जियों की उत्पादकता

क्र.सं.	जैविक खाद की किस्म	फसल का नाम	प्रति गमला उपज (ग्रा.) प्रथम कटाई	प्रति गमला उपज (ग्रा.) दूसरी कटाई
1.	गोबर की खाद	धनिया	181	17
		पालक	124	67
2.	पत्तों की खाद	धनिया	247	14
		पालक	238	64
3.	वर्मी कम्पोस्ट	धनिया	54	35
		पालक	380	156
4.	बाजरा अवशेष की खाद	धनिया	64	21
		पालक	188	151
5.	पालक अवशेष की खाद	धनिया	82	36
		पालक	240	182
6.	मूँग अवशेष की खाद	धनिया	112	34
		पालक	276	228
7.	मक्का अवशेष की खाद	धनिया	61	22
		पालक	185	144
8.	गेहूँ अवशेष की खाद	धनिया	160	19
		पालक	154	107
9.	सोयाबीन अवशेष की खाद	धनिया	66	20
		पालक	125	152
10.	नीम अवशेष की खाद	धनिया	95	17
		पालक	293	168

कंटेनर या गमलों में कृषि का भविष्य

गमलों में कृषि एक नया और सुगम जैविक तरीका है, जिसमें पौधों को उगाने के लिए मृदा के साथ विभिन्न जैविक खादों की आवश्यकता होती है। यह तकनीक विश्वभर में कृषि के क्षेत्र में एक बदलाव लाने की संभावना है। इसके लाभ और सरलता के कारण, यह लोगों के बीच बहुत ही लोकप्रिय हो रही है। आने वाले समय में, गमलों में





कृषि का प्रयोग बढ़ेगा और यह विशेष रूप से उन लोगों के लिए महत्वपूर्ण होगा जो शहरों में अपने घरों के आसपास खेती करना चाहते हैं। इससे न केवल उपज में वृद्धि होगी, बल्कि पर्यावरण को भी बचावा मिलेगा। इस प्रकार, पॉट खेती एक नए और सुगम तरीके से कृषि के क्षेत्र में आधुनिकीकरण का एक प्रमुख उदाहरण है। आने वाले समय में, इसका प्रयोग और विकास और भी गहरा होगा, जिससे कृषि के क्षेत्र में नई दिशाएं और नई संभावनाएं उत्पन्न होंगी।



आधुनिक कृषि में परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी) की भूमिका

अमित गुप्ता, दिलीप कुमार कुशवाहा, पी.के. साहू, आर.एन. साहू, अंचल दास एवं जगजीत सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय कृषि ने 1960 के दशक की हरित क्रांति के बाद से एक लंबा सफर तय किया है। उन्नत बीजों, उर्वरकों और सिंचाई के विस्तार ने देश को खाद्यान्न में आत्मनिर्भर भी बनाया। किंतु वर्तमान में, भारतीय कृषि एक गंभीर स्थिति पर खड़ी है। एक ओर बढ़ती जनसंख्या के पेट भरने की चुनौती है, तो दूसरी ओर घटती जोत, गिरता भूजल स्तर, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट और जलवायु परिवर्तन का संकट है। पारंपरिक कृषि पद्धतियों में पूरे खेत को एक समान इकाई माना जाता है, जहाँ उर्वरक, पानी और कीटनाशकों का छिड़काव एक समान दर पर किया जाता है। यह पद्धति इस वैज्ञानिक तथ्य की अनदेखी करती है कि खेत का हर हिस्सा समान नहीं होता है। मिट्टी की उर्वरता, नमी धारण करने की क्षमता और फसल की स्थिति एक ही खेत के भीतर भिन्न-भिन्न स्थानों पर अलग-अलग होती है। "एक आकार सभी के लिए फिट बैठता है" (एक ही तरीका सब पर लागू होने) वाला दृष्टिकोण न केवल संसाधनों की बर्बादी करता है, बल्कि पर्यावरण को भी प्रदूषित करता है और इनपुट लागत बढ़ाकर किसान के मुनाफे को कम करता है। इन चुनौतियों के बीच, परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी) वीआरटी सटीक कृषि के तहत एक क्रांतिकारी समाधान के रूप में उभरी है। वीआरटी का मूल दर्शन अत्यंत तर्कसंगत है - संसाधनों का उपयोग आर "सही इनपुट, सही समय, सही स्थान, सही दर, और सही स्रोत" का प्रयोग करना। यह तकनीक किसानों को खेत के भीतर की विभिन्नताओं को पहचानने और उनके अनुसार इनपुट (बीज, खाद, पानी) की मात्रा को समायोजित करने में सक्षम बनाती है।

परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी) क्या है?

परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी) एक स्वचालित कृषि पद्धति है जो खेत के भीतर विशिष्ट स्थानों की आवश्यकताओं के आधार पर कृषि आदानों (इनपुट) जैसे उर्वरक, बीज, सिंचाई जल, और कीटनाशकों की दर को नियंत्रित करती है। पारंपरिक पद्धति के विपरीत, जहाँ एक वाल्व सेट किया जाता है और पूरा खेत एक समान दर प्राप्त करता है, वीआरटी सिस्टम जीपीएस और मानतचित्रों या सेंसरों का उपयोग करके यह निर्धारित करता है कि मशीन खेत के किस हिस्से में चल रही है और वहां कितनी सामग्री गिराने की आवश्यकता है। वीआरटी की अवधारणा 1980 के दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप में सटीक कृषि के उदय के साथ विकसित हुई। प्रारंभिक चरण में यह मृदा परीक्षण मानचित्रों पर आधारित थी, लेकिन सेंसर तकनीक और सैटेलाइट इमेजरी में प्रगति के साथ, यह अब वास्तविक समय में निर्णय लेने में सक्षम हो गई है। इसका मुख्य उद्देश्य इनपुट दक्षता को अधिकतम करना और पर्यावरणीय प्रभाव को न्यूनतम करना है।



परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी प्रणाली से लैस आधुनिक कृषि ट्रैक्टर

वीआरटी की कार्यप्रणाली

वीआरटी मुख्य रूप से दो तरीकों से काम करती है: मानचित्र-आधारित और सेंसर-आधारित। इन दोनों का उद्देश्य एक ही है, लेकिन कार्य करने का तरीका भिन्न होता है। मानचित्र-आधारित वी आर टी प्रणाली पूर्व-एकत्रित डेटा पर निर्भर करती है। इसमें डेटा संग्रहण, मानचित्र व इनपुट का प्रयोग मुख्य चरण होते हैं। प्रथम चरण में मृदा परीक्षण, उपज मॉनिटर डेटा, या सैटेलाइट इमेजरी के माध्यम से खेत का डेटा एकत्र किया जाता है। द्वितीय चरण में इस डेटा का उपयोग करके एक 'प्रिस्क्रिप्शन मैप' या नुस्खा मानचित्र तैयार किया जाता है, जो बताता है कि खेत के किस हिस्से में कितना इनपुट चाहिए। तृतीय चरण में डिजिटल नक्शा आधुनिक ट्रैक्टर के कंप्यूटर में अपलोड किया जाता है। जैसे ही ट्रैक्टर जीपीएस की मदद से खेत में चलता है, कंप्यूटर नक्शे को पढ़ता है और नियंत्रक को निर्देश देता है कि वह दर को कम या ज्यादा करे, जिससे इनपुट को सही तरीके से गिराया जाता है।

क. सेंसर-आधारित वीआरटी

यह प्रणाली वास्तविक समय में काम करती है और इसके लिए पहले से नक्शे की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें भी

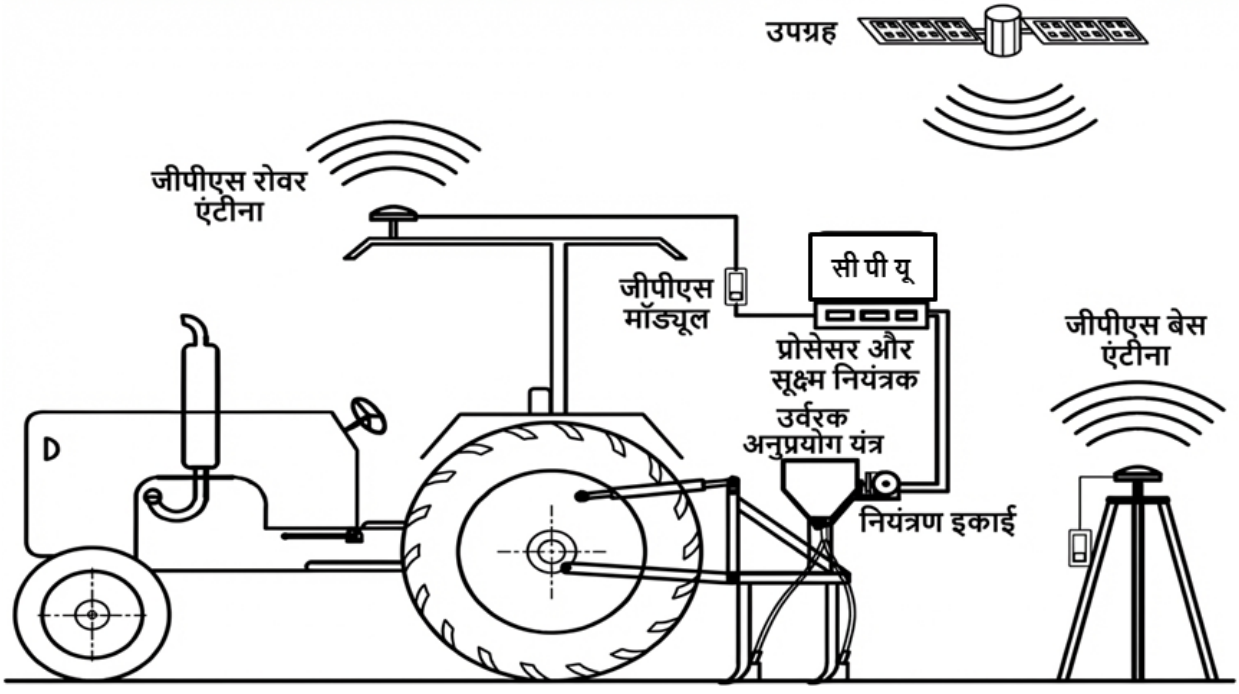
तीन चरणों में कार्य होता है। प्रथम चरण में, ट्रैक्टर या ड्रोन पर लगे सेंसर फसल की स्थिति (जैसे हरापन, बायोमास) या मिट्टी के गुणों को मापते हैं। द्वितीय चरण में, ऑन-बोर्ड कंप्यूटर तुरंत डेटा का विश्लेषण करता है और एल्गोरिदम का उपयोग करके खेत में इनपुट की आवश्यकता की गणना करता है। और तृतीय चरण में नियंत्रक तुरंत नोजल या स्प्रेडर को समायोजित करता है। ग्रीनसीकर सेंसर का उपयोग करके नाइट्रोजन का छिड़काव करना इसका प्रमुख उदाहरण है।

सारणी 7: मानचित्र-आधारित बनाम सेंसर-आधारित परिवर्तन दर प्रयोग की तुलना

विशेषता	मानिचत्र-आधारित वीआरटी	सेंसर-आधारित वीआरटी
डेटा स्रोत	ऐतहासिक डेटा, मृदा परीक्षण, सैटेलाइट चित्र	वास्तविक समय के आप्टिकल/सोनिक सेंसर
जीपीएस आवश्यकता	अनिवार्य (स्थान जानने के लिए)	वैकल्पिक (स्थान-विशिष्ट रिकार्डिंग के लिए)
प्रितिक्रया समय	योजनाबद्ध	तत्काल
सटीकता	समग्र खेत प्रबंधन के लिए बेहतर	नाइट्रोजन और खरपतवार प्रबंधन के लिए बेहतर
मुख्य अनुप्रयोग	पोटाश, फॉस्फोरस, बीज दर	नाइट्रोजन टॉप-ड्रेसिंग, शाकनाशी का छिड़काव

तकनीकी घटक: वीआरटी के निर्माण खंड

एक प्रभावी वीआरटी प्रणाली कई उन्नत तकनीकी घटकों जैसे की जीपीएस सेंसर, सेन्ट्रल प्रोसेसिंग यूनिट, नियंत्रण इकाई का एकीकरण है। इनमें से प्रत्येक घटक की अपनी भमिका महत्वपर्ण है।



डिजिटल मानचित्र-आधारित परिवर्तनीय दर उर्वरक अनुप्रयोग प्रणाली के प्रमुख घटक

जीपीएस सेंसर इस प्रणाली का प्रमुख घटक है। यह बताता है कि मशीन खेत में किस सटीक स्थान पर है। उच्च सटीकता के लिए रीयल टाइम काइनेमेटिक जीपीएस का उपयोग किया जाता है, जो 2 सेमी तक की सटीकता प्रदान करता है। भौगोलिक सूचना प्रणाली वह सॉफ्टवेयर है जो विभिन्न प्रकार के डेटा, जैसे मिट्टी के प्रकार, उपज इतिहास और टोपोग्राफी, को परतों के रूप में संसाधित करता है और 'एप्लिकेशन मैप' बनाता है। सेंसरों में मृदा सेंसर, फसल स्वास्थ्य सेंसर (सामान्यीकृत अंतर वनस्पति सूचकांक सेंसर) तथा उपज मॉनिटर शामिल हैं। परिवर्तनीय दर नियंत्रक वह कंप्यूटर है जो नक्शे या सेंसर से निर्देश प्राप्त करता है और मशीनरी के क्षेत्र या मोटर को नियंत्रित करता है।

भारत में वीआरटी की वर्तमान स्थिति और संभावनाएं

भारत में वीआरटी अभी शैशवावस्था में है, लेकिन इसका भविष्य उज्ज्वल है। विकसित देशों के विपरीत, जहाँ बड़े खेत मशीनीकरण को आसान बनाते हैं, भारत में छोटी जोत (औसत .08 हेक्टेयर) एक चुनौती है। फिर भी, 'कस्टम हायरिंग सेन्टर और 'फार्मर प्रोड्यूसर ऑर्गेनाइजेशन्स' के माध्यम से यह तकनीक

सुलभ हो सकती है। भारत सरकार की पहल जैसे 'एग्रीस्टैक' और 'नमो ड्रोन दीदी' योजनाएं वीआरटी को बढ़ावा दे रही हैं। इफको द्वारा नैनो-यूरिया के छिड़काव के लिए ड्रोन का उपयोग वीआरटी का ही एक रूप है। वर्तमान में पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र के प्रगतिशील किसान लेजर लैंड लेवलिंग के बाद अब वीआरटी आधारित उर्वरक उपयोग की ओर बढ़ रहे हैं।

वीआरटी के लाभ

वीआरटी केवल एक तकनीक नहीं है, बल्कि एक ऐसा निवेश है जो स्पष्ट आर्थिक और पर्यावरणीय लाभ प्रदान करता है। आर्थिक दृष्टि से, अध्ययनों में पाया गया है कि वीआरटी के उपयोग से उर्वरक की खपत में 5-25% तक की कमी हो सकती है, क्योंकि जहाँ मिट्टी पहले से उपजाऊ होती है वहाँ कम मात्रा में खाद डाली जाती है। संतुलित पोषण उपलब्ध होने के कारण फसल की पैदावार में 0-20% तक वृद्धि देखी गई है। इसके अतिरिक्त, इनपुट के इष्टतम उपयोग से प्रति एकड़ उत्पादन लागत भी घटती है। पर्यावरणीय दृष्टि से, वी आरटी नाइट्रेट लीचिंग को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नाइट्रोजन का अत्यधिक उपयोग भूजल को प्रदूषित करता है, जबकि वीआरटी यह सुनिश्चित करता है कि पौधों को उतनी ही नाइट्रोजन मिले जितनी उन्हें आवश्यकता है, जिससे अतिरिक्त नाइट्रोजन के रिसाव (लीचिंग) में कमी आती है और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिलता है।

विभिन्न अनुप्रयोग क्षेत्र

वीआरटी का उपयोग कृषि के लगभग हर पहलू में किया जा सकता है, जिससे संसाधनों का कुशल और सटीक उपयोग संभव होता है। इसका सबसे सामान्य उपयोग परिवर्तनीय दर उर्वरक अनुप्रयोग में होता है, जहाँ नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों को मृदा मानचित्र और फसल की आवश्यकता के अनुसार डाला जाता है। इसी प्रकार परिवर्तनीय दर बीजारोपण में मृदा की उत्पादन क्षमता के आधार पर बीज की मात्रा तय की जाती है, जिसमें उपजाऊ क्षेत्रों में अधिक तथा कम उपजाऊ क्षेत्रों में कम बीज बोए जाते हैं। जिससे पौधों के बीच प्रतिस्पर्धा घटती है और प्रति पौधा उत्पादन बढ़ता है। परिवर्तनीय दर सिंचाई के अंतर्गत खेत के निचले और अधिक नमी वाले भागों में कम पानी तथा ऊँचे या रेतीले क्षेत्रों में अधिक पानी दिया जाता है, जिससे जल उपयोग दक्षता में सुधार होता है। इसके अलावा खरपतवार और कीट प्रबंधन में सेंसर आधारित प्रणालियाँ खरपतवार या कीट प्रकोप की पहचान कर केवल प्रभावित क्षेत्रों में ही रसायनों का छिड़काव करती हैं, जिससे लागत कम होती है और पर्यावरण पर दुष्प्रभाव भी घटता है।

चुनौतियां और बाधाएं

इतने लाभों के बावजूद भारत में वीआरटी को अपनाने में कई प्रमुख बाधाएँ सामने आती हैं। सबसे बड़ी चुनौती इसकी उच्च प्रारंभिक लागत है, क्योंकि वीआरटी उपकरण, सेंसर और सॉफ्टवेयर महंगे होते हैं, जो छोटे और सीमांत किसानों की पहुँच से बाहर हैं। इसके अतिरिक्त किसानों और कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं में इस उन्नत और जटिल तकनीक को समझने तथा प्रभावी रूप से उपयोग करने के लिए आवश्यक तकनीकी ज्ञान और कौशल की कमी पाई जाती है। भारत में खेतों का आकार प्रायः छोटा और बिखरा हुआ होता है, जबकि वीआरटी आधारित मशीनीकरण और सटीक मैपिंग के लिए बड़े और समेकित भूखंड अधिक उपयुक्त माने जाते हैं। साथ ही खेतों से एकत्र किए गए विशाल मात्रा के डेटा का सही विश्लेषण और उसकी व्याख्या करना भी एक बड़ी चुनौती है। इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में मजबूत इंटरनेट और कनेक्टिविटी की कमी के कारण रियल-टाइम डेटा ट्रांसफर और तकनीक का पूर्ण लाभ उठाना कठिन हो जाता है।

निष्कर्ष

वीआरटी संसाधनों के सटीक और संतुलित उपयोग के माध्यम से खेती की लागत को कम करती है और साथ ही उत्पादन तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है। यह तकनीक उर्वरक, बीज, पानी और रसायनों के अनावश्यक उपयोग को घटाकर पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देती है। यद्यपि भारत में वीआरटी को अपनाने में उच्च लागत, तकनीकी ज्ञान की कमी, छोटे और बिखरे खेत तथा कमजोर डिजिटल अवसंरचना जैसी कई चुनौतियाँ मौजूद हैं। फिर भी उचित सरकारी नीतियों, सब्सिडी, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, स्वदेशी तकनीकी विकास और किसान संगठनों के माध्यम से इन बाधाओं को दूर किया जा सकता है। यदि नीति निर्माता, वैज्ञानिक, निजी क्षेत्र और किसान मिलकर सामूहिक प्रयास करें, तो वीआरटी भारतीय कृषि की दिशा और दशा दोनों बदल सकती है। यह तकनीक "अधिक फसल प्रति बूंद" और "खेत से थाली तक" खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को साकार करने की एक सशक्त कुंजी है। अब समय आ गया है कि हम मात्रा आधारित खेती से आगे बढ़कर गुणवत्ता, दक्षता और टिकाऊपन पर आधारित स्मार्ट कृषि को अपनाएँ।

भारत में ग्रामीण उद्यमिता: ग्रामीण विकास के लिए उत्प्रेरक

सुभाष कुमार सौरभ[1], वाणी चंद्रन[2] एवं अमनदीप रंजन[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (पूसा), नई दिल्ली

[2]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा

भारत विकासशील देशों में अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, जिसने पिछले दशक में लगभग 7% की औसत जीडीपी विकास दर का दावा किया है। भारत की 65% से अधिक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, देश का सामाजिक-आर्थिक ताना-बाना इन क्षेत्रों के विकास पर बहुत अधिक निर्भर करता है। सूचना प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढाँचे और सेवाओं जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। हालाँकि, प्राथमिक क्षेत्र- जिसमें कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन शामिल हैं- 68% से अधिक आबादी (2011 की जनगणना के अनुसार 1.21 बिलियन में से 830 मिलियन) को रोजगार देने के बावजूद कम प्रदर्शन कर रहा है, जिसकी औसत वार्षिक वृद्धि दर केवल लगभग 4% या उससे कम है। इस असमानता के परिणामस्वरूप ग्रामीण और शहरी आजीविका के बीच एक बड़ा अंतर पैदा हो गया है, जिसमें कृषि से होने वाले लाभ में कमी के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर काफी दबाव पड़ रहा है।

ग्रामीण उद्यमिता क्या है?

ग्रामीण उद्यमिता से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में शुरू होने वाली व्यावसायिक पहलों से है जो स्थानीय संसाधनों, पारंपरिक कौशल और सामुदायिक जुड़ाव का लाभ उठाती है। ग्रामीण उद्यम व्यावसायिक संस्थाएँ हैं, जो स्थानीय संसाधनों के प्रभावी उपयोग के माध्यम से राजस्व सृजन को बढ़ावा देती है और जमीनी स्तर पर सामाजिक परिवर्तन के एजेंट के रूप में कार्य करती हैं। इन उद्यमों में छोटे पैमाने के कृषि व्यवसाय, हस्तशिल्प, खुदरा, ग्रामीण पर्यटन और डिजिटल सेवाएँ शामिल हैं। ग्रामीण उद्यमी स्थानीय संसाधनों के अनूठे लाभों का दोहन करते हैं और क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, जिससे आर्थिक और सामाजिक दोनों ही दृष्टि से मूल्य का सृजन होता है। उनके व्यवसाय न केवल रोजगार और आय पैदा करते हैं बल्कि ग्रामीण परिदृश्य में नवाचार और जीवन शक्ति लाकर समुदायों को भी मजबूत करते हैं। हाल के वर्षों में, भारत सरकार ने समावेशी विकास को प्राप्त करने के लिए ग्रामीण उद्यमिता के महत्व को एक रणनीतिक प्राथमिकता के रूप में मान्यता दी है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (पीएमएमवाई), स्टार्टअप इंडिया और डिजिटल इंडिया कार्यक्रम जैसी पहलों ने वित्तपोषण, कौशल प्रशिक्षण और डिजिटल कनेक्टिविटी के रूप में आवश्यक सहायता प्रदान करके ग्रामीण व्यवसाय विकास को गति दी है। इन योजनाओं का उद्देश्य ग्रामीण उद्यमियों की यात्रा को सुगम और अधिक टिकाऊ बनाना है, जिससे एक आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिले जो देश के समग्र विकास पथ में योगदान दे।

आर्थिक विकास में ग्रामीण उद्यमिता की भूमिका

ग्रामीण उद्यमिता ग्रामीण और शहरी भारत के बीच विकास की खाई को पाटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक समावेशन और स्थानीय बुनियादी ढांचे के विकास के लिए उत्प्रेरक का काम करती है, जिससे यह टिकाऊ ग्रामीण विकास की आधारशिला बन जाती है। नीचे कुछ प्रमुख तरीके दिए गए हैं जिनसे ग्रामीण उद्यमिता ग्रामीण विकास में योगदान देती है।

1. आर्थिक सशक्तिकरण: ग्रामीण उद्यमिता रोजगार पैदा करती है और ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देती है, जिससे स्थानीय आबादी के लिए व्यवहार्य आय स्रोत और वित्तीय स्थिरता मिलती है। सूक्ष्म, लघु और मध्यम आकार के उद्यम (एमएसएमई) स्थापित करके, ग्रामीण उद्यमी न केवल खुद का और अपने परिवार का भरण-पोषण करते हैं, बल्कि समुदाय में अन्य लोगों के लिए रोजगार के अवसर भी पैदा करते हैं। एमएसएमई ग्रामीण आर्थिक विकास की रीढ़ बन गए हैं, जो भारत के सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 30% का योगदान करते हैं और लगभग 110 मिलियन लोगों को रोजगार देते हैं (पीआईबी, 2024)। भारत भर में इन लघु उद्योगों के प्रसार से गरीबी को काफी हद तक कम करने की क्षमता है, क्योंकि अधिक ग्रामीण परिवार स्थिर आय तक पहुँच सकते हैं और अपने जीवन स्तर में सुधार कर सकते हैं।

2. पलायन में कमी: भारत में शहरी पलायन एक लगातार समस्या बनी हुई है, क्योंकि लोग बेहतर रोजगार, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा की तलाश में शहरों की ओर रुख करते हैं। हालांकि, इस पलायन के कारण शहरी इलाकों में भीड़भाड़ बढ़ जाती है और ग्रामीण समुदाय कमज़ोर हो जाते हैं। स्थानीय अवसरों को बढ़ावा देकर, ग्रामीण उद्यमिता इस प्रवृत्ति को उलट सकती है। उदाहरण के लिए, जब स्थानीय निवासियों के पास लाभदायक व्यावसायिक उपक्रमों तक पहुँच होती है, तो उनके अपने समुदायों को छोड़ने की संभावना कम होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में नौकरियों की उपलब्धता व्यक्तियों को घर के करीब काम करने में सक्षम बनाती है, जिससे उनके सामाजिक

संबंध, सांस्कृतिक विरासत और पारिवारिक बंधन बने रहते हैं। यह युवाओं के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जो शहरों में स्थानांतरित होने के दबाव को महसूस किए बिना अपने समुदायों में उत्पादक रूप से योगदान दे सकते हैं।

3. स्थानीय बुनियादी ढांचे में सुधार: सफल ग्रामीण उद्यमिता का स्थानीय बुनियादी ढांचे पर कई गुना प्रभाव पड़ता है। जैसे-जैसे ग्रामीण व्यवसाय बढ़ते हैं, वे बेहतर सड़कों, बेहतर परिवहन और भंडारण और रसद के लिए उन्नत सुविधाओं की मांग बढ़ाते हैं। बदले में, इससे बुनियादी ढांचे का विकास होता है जिससे पूरे समुदाय को लाभ होता है। उदाहरण के लिए, बेहतर परिवहन नेटवर्क और डिजिटल कनेक्टिविटी ग्रामीण क्षेत्रों को बाहरी बाजारों के लिए खोलती है, जिससे ग्रामीण उद्यमी स्थानीय समुदाय से परे अपने ग्राहक आधार का विस्तार करने में सक्षम होते हैं। यह बुनियादी ढांचा सुधार स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा जैसी आवश्यक सेवाओं को और अधिक सुलभ बनाता है, जिससे ग्रामीण निवासियों के लिए जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार होता है।

4. सामाजिक प्रभाव और सामुदायिक विकास: आर्थिक लाभों से परे, ग्रामीण उद्यमिता सामाजिक सशक्तिकरण में योगदान देती है, खासकर पारंपरिक रूप से हाशिए पर पड़े समूहों जैसे महिलाओं, युवाओं और निम्न आय वाले समुदायों के लिए। उद्यमशील उद्यम अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में नेतृत्व के अवसर पैदा करते हैं, स्थानीय गौरव और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देते हैं। उदाहरण के लिए, महिलाओं के नेतृत्व वाले उद्यम महिलाओं को घरेलू जिम्मेदारियों से परे भूमिकाएँ निभाने के लिए सशक्त बना सकते हैं, जिससे निर्णय लेने की शक्ति और वित्तीय स्वतंत्रता में वृद्धि होती है। युवा उद्यमिता भी इसी तरह परिवर्तनकारी है, क्योंकि यह युवा पीढ़ी की क्षमता और ऊर्जा को उत्पादक गतिविधियों में लगाती है, उनमें उद्देश्य और सामुदायिक जिम्मेदारी की भावना पैदा करती है।

ग्रामीण उद्यमिता में क्षेत्रीय रुझान

1. कृषि व्यवसाय: कृषि व्यवसाय ग्रामीण उद्यमिता की आधारशिला बना हुआ है, जो जैविक खेती, खाद्य प्रसंस्करण, मधुमक्खी पालन और कृषि प्रौद्योगिकी समाधानों पर ध्यान केंद्रित करता है।

2. हस्तशिल्प और कुटीर उद्योग: बुनाई, मिट्टी के बर्तन और लकड़ी के काम जैसे पारंपरिक शिल्प डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से फल-फूल रहे हैं।

3. ग्रामीण पर्यटन: ग्रामीण पर्यटन पहल भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और प्राकृतिक सुंदरता का लाभ उठाती है।

4. पॉलिमर और रसायन आधारित उद्योग: इन उद्योगों में हेयर ऑयल, हेयर कंडीशनर, बिंदी, अगरबत्ती और डिटर्जेंट केक का निर्माण शामिल है।

5. कृषि आधारित उद्योग: इनमें पौधों और जानवरों से प्राप्त कच्चे माल जैसे सूती वस्त्र, चमड़े के उत्पाद और अचार का उपयोग शामिल है।

6. वन आधारित उद्योग: ये उद्योग कच्चे माल के रूप में वन उपज का उपयोग करते हैं, जैसे कागज, फर्नीचर और बांस के उत्पाद।





भारत में ग्रामीण उद्यमिता की वर्तमान स्थिति

भारत में ग्रामीण उद्यमिता वर्तमान में विकास और परिवर्तन के दौर से गुजर रही है, जिसे नीतिगत पहलों, डिजिटल प्रगति और ग्रामीण आकांक्षाओं में बदलाव का समर्थन प्राप्त है। आर्थिक समावेशिता प्राप्त करने में ग्रामीण उद्यमिता के महत्व को पहचानते हुए, भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवसाय वृद्धि को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से विभिन्न योजनाएँ शुरू की हैं। सबसे अधिक ग्रामीण उद्यम वाले राज्य पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र और केरल हैं। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय के अनुसार, एमएसएमई भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 30% हिस्सा है और लगभग 110 मिलियन लोगों को रोजगार प्रदान करता है। इन उद्यमों का एक महत्वपूर्ण प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में आधारित है, जिसमें खाद्य प्रसंस्करण, हस्तशिल्प और कृषि व्यवसाय ग्रामीण एमएसएमई विकास में प्रमुख योगदानकर्ता हैं (भारत सरकार, 2024)।

31 मार्च, 2022 तक, भारत में 63 मिलियन से अधिक सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (एमएसएमई) थे, जिनमें से लगभग 94 प्रतिशत सूक्ष्म उद्यम थे। 30 अप्रैल, 2022 को जारी आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, देश के 6.33 करोड़ एमएसएमई में लगभग 12 करोड़ कर्मचारी कार्यरत हैं। विश्व बैंक डेटा 2019 के अनुसार, भारत की लगभग 65 प्रतिशत आबादी, जिनमें से अधिकांश (लगभग 58 प्रतिशत) कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से अपनी आजीविका कमाते

हैं (लिंगम, 2023)। नवीनतम रिपोर्टों के अनुसार, पीएमएमवाई ने अपने शुरुआत के बाद से छोटे और सूक्ष्म व्यवसायों को ₹23.2 लाख करोड़ से अधिक ऋण वितरित किए हैं, जिसमें ग्रामीण उद्यमियों को पर्याप्त हिस्सा मिला है। इन निधियों ने ग्रामीण उद्यमों को आर्थिक रूप से चुनौतीपूर्ण अवधियों में भी, विस्तार करने, नवाचार करने और संचालन को बनाए रखने में सक्षम बनाया है (भारत सरकार की रिपोर्ट, 2024)।







ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने वाली भारत सरकार की पहल

भारत सरकार ने ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कई पहल शुरू की हैं:

1. प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (पीएमएमवाई): यह कारीगरों, विक्रेताओं और उद्यमियों सहित छोटे व्यवसाय मालिकों को 10 लाख रूपये तक का ऋण प्रदान करती है, जिससे वे अपने उद्यम शुरू कर सकें या उनका विस्तार कर सकें।

2. दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना (डीडीयू-जीकेवाई): ये ग्रामीण युवाओं, विशेष रूप से हाशिए के समुदायों के युवाओं के लिए कौशल विकास और वेतन रोजगार पर केंद्रित है। इस योजना के माध्यम से, सरकार कृषि, विनिर्माण और सेवाओं जैसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान करती है, जिससे ग्रामीण युवाओं को बाजार-प्रासंगिक कौशल से लैस किया जाता है।

3. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम): इसका उद्देश्य ग्रामीण गरीबों के बीच स्वरोजगार और संगठनात्मक क्षमता निर्माण को बढ़ावा देकर गरीबी को कम करना है। कार्यक्रम स्वयं सहायता समूह और संघों के गठन को प्रोत्साहित करता है, जिससे ऋण और कौशल विकास तक पहुँच आसान होती है।

4. नवाचार, ग्रामीण उद्योग और उद्यमिता को बढ़ावा देने की योजना (एस्पायर): सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय (एमएसएमई) की यह योजना सरकार और कार्यान्वयन एजेंसियों के बीच बातचीत के लिए एक ऑनलाइन इंटरफ़ेस प्रदान करती है।

5. प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी): एमएसएमई का यह ऋण-लिंक्ड सब्सिडी कार्यक्रम बेरोजगार युवाओं और पारंपरिक कारीगरों को गैर-कृषि क्षेत्र में सूक्ष्म उद्यम स्थापित करने में मदद करता है।

6. सूक्ष्म उद्यमिता विकास कार्यक्रम (एमईडीपी) और आजीविका और उद्यम विकास कार्यक्रम (एलईडीपी): राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के ये कार्यक्रम ग्रामीण उद्यमियों को वित्तीय सहायता और कौशल विकास प्रदान करते हैं।

7. प्रधानमंत्री वन धन योजना (पीएमवीडीवाई): पीएमवीडीवाई वन उपज के मूल्य संवर्धन और विपणन को बढ़ावा देकर आदिवासियों की आजीविका को बढ़ाने का प्रयास करती है। इस योजना के तहत, आदिवासी समुदायों को लघु वन उपज के संग्रह, प्रसंस्करण और विपणन जैसी मूल्य श्रृंखला गतिविधियों को करने के लिए वन धन विकास केंद्रों (वीडीवीके) में संगठित किया जाता है।

8. स्टार्ट-अप विलेज एंटरप्रेन्योरशिप प्रोग्राम (एसवीईपी): ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा शुरू किया गया एसवीईपी ग्रामीण क्षेत्रों में सूक्ष्म उद्यमों और स्वरोजगार को बढ़ावा देने पर केंद्रित है। यह ग्राम उद्यमिता समितियों (वीईसी) के निर्माण के लिए सहायता प्रदान करता है और ग्रामीण उद्यमियों के लिए ऋण, प्रौद्योगिकी और बाजार संपर्क तक पहुंच की सुविधा प्रदान करता है।





ग्रामीण उद्यमियों के सामने चुनौतियाँ

प्रगति और समर्थन तंत्र के बावजूद, भारत में ग्रामीण उद्यमियों को कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो उनके विकास और सफलता में बाधा बन सकती हैं। सतत् विकास के लिए ग्रामीण उद्यमिता की क्षमता को पूरी तरह से उजागर करने के लिए इन मुद्दों को संबोधित करना महत्वपूर्ण है।

1. वित्त तक सीमित पहुँच: ग्रामीण उद्यमियों के लिए ऋण तक पहुँच सबसे बड़ी बाधाओं में से एक है। जबकि प्रधानमंत्री मुद्रा योजना जैसी योजनाएँ वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं, कई उद्यमी अभी भी संपार्श्विक की कमी, अपर्याप्त वित्तीय साक्षरता या अनौपचारिक उधारदाताओं द्वारा लगाए गए उच्च ब्याज दरों के कारण ऋण प्राप्त करने के लिए संघर्ष करते हैं। दूरदराज के क्षेत्रों में बैंकिंग बुनियादी ढांचे की अनुपस्थिति स्थिति को और जटिल बनाती है, जिससे ग्रामीण उद्यमियों के पास अपने उद्यमों के वित्तपोषण के लिए सीमित विकल्प रह जाते हैं।

2. अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा: बुनियादी ढाँचे की कमी, जैसे खराब सड़कें, बिजली की कमी और सीमित इंटरनेट कनेक्टिविटी, ग्रामीण व्यापार संचालन को काफी प्रभावित करती हैं। ये मुद्दे ग्रामीण क्षेत्रों से माल के परिवहन में बाधा डालते हैं, बाजार तक पहुँच को सीमित करते हैं और डिजिटल वाणिज्य को प्रतिबंधित करते हैं। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY) और भारतनेट जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण बुनियादी ढाँचे को बेहतर बनाने पर सरकार के ध्यान के बावजूद, कई ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी कनेक्टिविटी की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जो ग्रामीण उद्यमों के विस्तार को सीमित करता है।

3. कौशल विकास और प्रशिक्षण की कमी: कई ग्रामीण उद्यमियों के लिए व्यवसाय और तकनीकी कौशल में अंतर एक बड़ी बाधा बनी हुई है। मार्केटिंग, वित्तीय प्रबंधन और डिजिटल साक्षरता से जुड़े कौशल व्यवसाय विकास के लिए आवश्यक हैं, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में अक्सर इनकी कमी होती है। हालाँकि स्किल इंडिया और दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना (DDU-GKY) जैसे सरकारी कार्यक्रम कौशल विकास प्रदान करते हैं, लेकिन इन कार्यक्रमों की पहुँच और प्रभावशीलता अलग-अलग होती है, जिससे कई उद्यमी वंचित रह जाते हैं।

4. बाजार तक पहुंच और वितरण की चुनौतियां: ग्रामीण उद्यमियों को अक्सर बाजार के रुझानों, अकुशल रसद और नेटवर्क संपर्कों की कमी के बारे में सीमित जानकारी के कारण बड़े बाजारों तक पहुंचने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। शहरी केंद्रों से दूरी परिवहन लागत को भी बढ़ा सकती है, जिससे ग्रामीण उत्पाद कम प्रतिस्पर्धी बन जाते हैं। जबकि ई-कॉमर्स और डिजिटल मार्केटप्लेस संभावित समाधान प्रदान करते हैं, अपर्याप्त डिजिटल बुनियादी ढाँचा और ग्रामीण उद्यमियों के बीच सीमित डिजिटल साक्षरता इन प्लेटफार्मों में उनकी भागीदारी को सीमित कर सकती है।

5. सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएँ: कुछ क्षेत्रों में, पारंपरिक मान्यताएँ और सांस्कृतिक मानदंड उद्यमशीलता की गतिविधियों को प्रतिबंधित कर सकते हैं, खासकर महिलाओं के लिए। सामाजिक अपेक्षाएँ, सीमित पारिवारिक समर्थन और सुरक्षा और गतिशीलता के बारे में चिंताएँ व्यावसायिक उपक्रमों में महिलाओं की भागीदारी को प्रतिबंधित करती हैं। इन मानदंडों को बदलना एक क्रमिक प्रक्रिया है, जिसके लिए महिलाओं का समर्थन करने के लिए सामुदायिक जागरूकता, प्रशिक्षण और प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है।

भविष्य की संभावनाएँ

भारत में ग्रामीण उद्यमिता की भविष्य की संभावनाएँ उज्ज्वल हैं, जो सहायक सरकारी पहलों, प्रौद्योगिकी तक बढ़ी हुई पहुँच और कौशल विकास पर बढ़ते जोर से प्रेरित हैं। दीनदयाल अंत्योदय योजना और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसे कार्यक्रम वित्तीय और अवसंरचनात्मक सहायता में वृद्धि का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। डिजिटल मार्केटप्लेस के उदय से ग्रामीण उद्यमियों को व्यापक बाजारों तक पहुँचने का मौका मिलता है, जबकि प्रशिक्षण कार्यक्रम कार्यबल को आवश्यक कौशल से सशक्त बनाते हैं। इसके अतिरिक्त, संधारणीय प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करने से पर्यावरण के अनुकूल उद्यमों के लिए अवसर मिलते हैं जो आधुनिक उपभोक्ताओं के साथ प्रतिध्वनित होते हैं। सहकारी समितियों जैसे समुदाय-केंद्रित व्यवसाय मॉडल स्थानीय उद्यमियों के बीच सहयोग और संसाधन साझाकरण को बढ़ावा दे सकते हैं। अभिनव समाधानों के माध्यम से मौजूदा चुनौतियों का समाधान करके, ग्रामीण उद्यमिता व्यापक ग्रामीण विकास के लिए एक महत्वपूर्ण उत्प्रेरक के रूप में उभर सकती है, जो भारत के समग्र आर्थिक विकास में योगदान दे सकती है।

निष्कर्ष

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास और आजीविका में सुधार के लिए ग्रामीण उद्यमिता महत्वपूर्ण है, भले ही पूंजी तक सीमित पहुंच, अपर्याप्त बुनियादी ढांचे और सामाजिक बाधाओं जैसी चुनौतियां हों। प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी), मुद्रा ऋण और राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-एनएएम) जैसी सरकारी पहल महत्वाकांक्षी उद्यमियों के लिए आवश्यक सहायता प्रदान करती हैं। कौशल विकास को बढ़ावा देकर, बुनियादी ढांचे को बढ़ाकर और बाजार तक पहुंच को सुविधाजनक बनाकर, हितधारक ग्रामीण उद्यमियों, विशेष रूप से महिलाओं और हाशिए के समुदायों को सशक्त बना सकते हैं, जिससे एक समावेशी पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा मिलता है। ग्रामीण उद्यमिता में निवेश न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं को उत्तेजित करता है बल्कि जीवन को भी बदलता है, जिससे राष्ट्र के लिए समृद्ध और न्यायसंगत भविष्य का मार्ग प्रशस्त होता है।

बीज की गुणवत्ता और अंकुरण: सफल खेती की नींव

अश्वनी पाण्डेय[1], शिव शंकर शर्मा[1], रंजीत कुशवाहा[1], शिवा त्रिपाठी[1], ज्योति शर्मा[1], पूजा गर्ग[1], भावना मदान[2] एवं महेश राव[1]

[1]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी संस्थान, पूसा कैंपस, नई दिल्ली
[2]भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली

बीज की गुणवत्ता और उसका सफल अंकुरण किसी भी फसल की उत्पादकता और स्थायित्व की आधारशिला होता है। बीज अंकुरण वह प्रारंभिक जैविक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से एक सुप्त बीज सक्रिय होकर स्वस्थ पौधे का रूप धारण करता है। इस लेख में बीज की संरचना, अच्छे बीज के गुण, अंकुरण की प्रक्रिया तथा उसकी प्रमुख अवस्थाओं का सरल एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझाया गया है। साथ ही पौध वृद्धि के लिए आवश्यक पर्यावरणीय कारकों- जैसे जल, वायु, तापमान, मिट्टी और प्रकाश-की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। लेख में यह भी बताया गया है कि वैज्ञानिक बीज उपचार तकनीकें, जैसे रासायनिक एवं जैविक उपचार, बीज जनित एवं मृदा जनित रोगों से सुरक्षा प्रदान कर अंकुरण प्रतिशत बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। बीज ड्रेसिंग, कोटिंग एवं पेलेटिंग जैसी आधुनिक विधियाँ पौधों की प्रारंभिक वृद्धि को सशक्त बनाती हैं तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता बढ़ाती हैं। इसके अतिरिक्त, फ्लोटेशन टेस्ट एवं अंकुरण परीक्षण जैसी सरल बीज गुणवत्ता जाँच विधियाँ किसानों को खेत स्तर पर ही स्वस्थ बीजों के चयन में सहायता प्रदान करती हैं। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गुणवत्तापूर्ण बीज, उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियाँ एवं वैज्ञानिक बीज उपचार को अपनाकर फसल की उत्पादकता, गुणवत्ता और आर्थिक लाभ में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है। यह जानकारी छात्रों, किसानों और सामान्य पाठकों को बीज से संबंधित वैज्ञानिक तथ्यों को आसानी से समझने और खेती में सही निर्णय लेने में सहायक है।

मुख्य शब्द

बीज गुणवत्ता, बीज अंकुरण, अंकुरण परीक्षण, पौध वृद्धि, फसल उत्पादकता, जैविक एवं रासायनिक उपचार।

परिचय

बीज कृषि उत्पादन की मूल इकाई है, जिसकी गुणवत्ता फसल की सफलता और उत्पादकता को सीधे प्रभावित करती है। स्वस्थ एवं गुणवत्तापूर्ण बीज न केवल बेहतर अंकुरण सुनिश्चित करते हैं, बल्कि पौधों की प्रारंभिक वृद्धि और विकास को भी सुदृढ़ बनाते हैं। बीज अंकुरण एक महत्वपूर्ण जैविक प्रक्रिया है, जो उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियों और वैज्ञानिक प्रबंधन के तहत सफलतापूर्वक संपन्न होती है। आधुनिक बीज उपचार तकनीकों और गुणवत्ता परीक्षण विधियों के माध्यम से बीजों की क्षमता में वृद्धि कर फसल उत्पादन को अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है।

बीज की पहचान

बीज पौधे का प्रारंभिक रूप होता है, जिसमें एक भ्रूण (Embryo), भोजन भंडार (Endosperm/Cotyledon) और बीजावरण (Seed coat) होता है। अच्छे बीज की पहचान स्वस्थ, पूर्ण विकसित, रोग-मुक्त तथा उच्च अंकुरण क्षमता से की जाती है। बीज सख्त, चमकदार और बिना किसी छेद या फफूंद के होना चाहिए। खेती की सफलता का पहला चरण सही बीज का चयन है।



चित्र 1: अच्छे (स्वस्थ) एवं खराब (सिकुड़े) बीजों की तुलना

बीज अंकुरण क्या है?

जब बीज को पानी, हवा और उपयुक्त तापमान मिलता है, तब वह जीवित होकर छोटा पौधा बनना शुरू करता है। इस प्रक्रिया को अंकुरण (Germination) कहते हैं।

बीज अंकुरण की मुख्य अवस्थाएँ

1. **पानी का अवशोषण (Imbibition):** बीज पानी सोखता है और उसकी आंतरिक क्रियाएँ शुरू होती हैं, जिससे उसका बाहरी छिलका नरम होकर फट जाता है।
2. **जड़ का निकलना (Radicle emergence):** सबसे पहले जड़ बाहर आती है, जो नीचे मिट्टी की ओर जाती है और पानी, पोषक तत्व ग्रहण करती है।
3. **तना (Plumule emergence) और पत्तियों का विकास:** तना ऊपर की ओर बढता है और पत्तियाँ निकलती हैं, पौधा प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis) शुरू करता है, जिससे पौधा अपना भोजन स्वयं बनाने लगता है।



चित्र 2: बीज अंकुरण: (i) खेत में बीज अंकुरण एवं पौध उगाव (Field Emergence), (ii) प्रयोगशाला में बीज अंकुरण (Petri Dish Method), (iii) प्रांकुर (Plumule) एवं प्रारंभिक पत्तियों का विकास, (iv) गमले में अंकुरित पौधे (Seedlings)

पौधे की वृद्धि के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ

1. **पानी:** पौधे की वृद्धि के लिए जल और पोषक तत्वों के संचार के लिए नमी आवश्यक है, किन्तु अधिक जल या अधिक पानी से बीज सड़ सकता है।
2. **हवा:** बीज को श्वसन के लिए ऑक्सीजन और भोजन बनाने के लिए कार्बन डाइऑक्साइड की आवश्यकता होती है। बहुत गीली मिट्टी में हवा की कमी हो जाती है।
3. **तापमान:** हर पौधे के लिए एक अनुकूल तापमान होता है, किन्तु अधिकांश फसलों के लिए 20–30°C तापमान उपयुक्त होता है, अधिक ठंड या गर्मी में अंकुरण प्रभावित होता है।
4. **मिट्टी:** भुरभुरी, उपजाऊ और जल निकास वाली मिट्टी में जैविक पदार्थ होना लाभदायक होता है जो जड़ों को पकड़ और भोजन प्रदान करता है।
5. **प्रकाश (कुछ पौधों के लिए):** कुछ बीज अंधेरे में, कुछ हल्के प्रकाश में बेहतर उगते हैं अथवा पौधों के लिए पर्याप्त रोशनी अनिवार्य है।

बीज उपचार में विज्ञान की भूमिका

उन्नत बीज तकनीक, बीज उपचार और जैवप्रौद्योगिकी से अंकुरण क्षमता बढ़ती है तथा पौधे रोग और प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति अधिक सहनशील बनते हैं। उन्नत किस्में जल्दी और समान रूप से उगती हैं।

रासायनिक उपचार (Chemical treatment)

बीज उपचार बुवाई या रोपण से पूर्व किया जाने वाला रासायनिक अथवा जैविक उपचार है, जिसका उद्देश्य मृदा एवं बीज जनित कीट-रोगों से फसल की सुरक्षा कर उत्पादकता बढ़ाना है। वर्तमान में लगभग 70 प्रतिशत बीज किसान अपने स्वयं के भंडार से बिना उपचार के बोते हैं, जिससे फसल उत्पादन प्रभावित होता है। बीज उपचार एकीकृत कीट प्रबंधन का महत्वपूर्ण घटक है, परंतु जानकारी व जागरूकता की कमी के कारण इसका व्यापक उपयोग नहीं हो रहा है। यदि किसान स्वयं बीज उपचार अपनाते हैं तो उन्हें 8-10 प्रतिशत तक अतिरिक्त आर्थिक लाभ प्राप्त हो सकता है। इसी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने रबी मौसम में सभी प्रमुख फसलों में 100 प्रतिशत बीज उपचार सुनिश्चित करने हेतु देशव्यापी अभियान शुरू करने का निर्णय लिया है। इसके अंतर्गत बीज वितरण एजेंसियों द्वारा बिना उपचारित बीज की बिक्री रोकना, राज्य, जिला एवं ब्लॉक स्तर पर अभियान की निगरानी, प्रमुख रबी फसलों की पहचान तथा आवश्यक बीज, रासायनिक व जैव कीटनाशकों और बीज ड्रेसिंग उपकरणों की उपलब्धता सुनिश्चित करना-प्रमुख है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु युद्धस्तर पर अभियान चलाकर यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि किसान बिना बीज उपचार के फसल बुवाई न करें।

बीज उपचार करने की विधियाँ

बीज उपचार एक शब्द है, जो जातियों और प्रक्रियाओं दोनों का वर्णन करता है। विशिष्ट उत्पादों और विशिष्ट तकनीकों की उपयोग से बीज अंकुर और युवा पौधों के लिए विकास में सहायता करता है। बीज उपचार की जटिलता एक मूल ड्रेसिंग से लेकर कोटिंग और पेलेटिंग तक होती है।

(क) बीज ड्रेसिंग: यह बीज उपचार का सबसे आम तरीका है। बीज को या तो सूखे सूत्रीकरण के साथ तैयार किया जाता है या घोल या तरल निर्माण के साथ गीला किया जाता है। ड्रेसिंग को खेत और उद्योग दोनों पर लगाया जा सकता है। कम लागत वाले मिट्टी के बर्तनों का उपयोग कीटनाशकों को बीज के साथ मिश्रित करने के लिए किया जा सकता है या बीज को एक पॉलीथीन शीट पर फैलाया जा सकता है और आवश्यक मात्रा में रसायनों को बीज लॉट पर और यंत्रवत रूप से किसानों द्वारा मिश्रित किया जाता है।

(ख) बीज कोटिंग: एक विशेष बंधने की मशीन का उपयोग बीज कोटिंग के लिए किया जाता है। कोटिंग के लिए उद्योग द्वारा उन्नत उपचार पालन को बढ़ाने के लिए एक सूत्रीकरण के साथ किया तकनीक की आवश्यकता होती है।

(ग) बीज पेलेटिंग: सबसे परिष्कृत बीज उपचार प्रौद्योगिकी, जिसके परिणामस्वरूप तौलु और हैंडलिंग को बढ़ाने के लिए एक बीज का भौतिक आकार बदल जाता है। पेलेटिंग के लिए विशेष एप्लिकेशन मशीनरी और तकनीकों की आवश्यकता होती है और यह सबसे महंगा अनुप्रयोग है।

बीजोपचार से लाभ

यह उपचार अंकुरण दर में सुधार करता है, पौधों की प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाता है, जिससे वे रोगों के प्रति अधिक सहनशील बनते हैं, साथ ही फसल की उत्पादकता में वृद्धि करता है और अंततः उपज की गुणवत्ता में भी सुधार लाता है।

बीजों का टीकाकरण करने के बाद सावधानियाँ

1. उपचारित बीजों को गीली जगह पर न रखें।
2. बीजों की आवश्यक मात्रा को ही उपचारित करें तथा उपचारित बीजों को घरेलू उपयोग एवं जानवरों के उपयोग में न लाएँ और उपचारित बीजों का भण्डारण न करें।
3. फफूंदीनाशक दवा किसी प्रमाणित कम्पनी से ही खरीदें तथा कार्य करते समय उत्पादन और उसके समाप्ति का दिनांक जरूर देखें।
4. जिस व्यक्ति को हाथ या पांव में घाव खरोंच आदि हो, उससे बीज उपचार न कराएं।
5. बीजों के उपचारित बंद कमरे में न करें।
6. बीज उपचार करने के बाद शरीर को अच्छी तरह से धो लें।

प्रमुख फसलों में व्यापक बीज उपचार पद्धतिया

विभिन्न फसलों में मृदा, बीज एवं कंद जनित रोग-कीटों के नियंत्रण हेतु बीज उपचार की सिफारिश की गई है। मक्का, मिर्च, बैंगन, सूरजमुखी, धनिया एवं दलहनी सब्जियों में मृदा जनित फंगल रोगों के लिए मुख्यत: ट्राइकोडर्मा विरिडी एवं ट्राइकोडर्मा हार्जिएनम का उपयोग बीज उपचार में किया जाता है। मिर्च में एन्थ्रेक्नोज व जीवाणुजनित रोगों हेतु ट्राइकोडर्मा के साथ कार्बेन्डाजिम प्रभावी है। मटर एवं चना में रूट सड़ंध, सफेद सड़ंध, विल्ट व नेमाटोड नियंत्रण के लिए जैव-एजेंट्स (ट्राइकोडर्मा, बेसिलस, स्यूडोमोनास) तथा आवश्यकता अनुसार रासायनिक दवाएँ प्रयोग की जाती हैं। प्याज में स्मट रोग हेतु ट्राइकोडर्मा या विटावैक्स, गेहूँ में दीमक के लिए क्लोरपाइरीफॉस तथा आलू में मृदा व कंद जनित रोगों से बचाव हेतु भंडारण से पूर्व रासायनिक उपचार की सलाह दी गई है। बीज उपचार सामान्यतः सीड ड्रेसर या उपयुक्त बर्तनों में किया जाता है।

बीज परीक्षण की सरल विधियाँ

1. **फ्लोटेशन टेस्ट (Flotation Test / Specific Gravity Test):** यह विधि इस वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित है कि स्वस्थ बीजों का घनत्व (Density) पानी से अधिक होता है, जबकि कीटों से प्रभावित या खोखले बीजों का घनत्व कम होता है। अंतर्राष्ट्रीय बीज परीक्षण संघ (ISTA) के अनुसार, घनत्व पृथक्करण (Density Separation) बीज की भौतिक शुद्धता और व्यवहार्यता जाँचने का एक मानक तरीका है।
2. **अंकुरण परीक्षण (Rag Doll / Paper Towel Method):** बीज अंकुरण के लिए रैगडॉल विधि में एक कागज़ के तौलिये (या कपड़े) को गीला करना, उस पर समान रूप से बीज फैलाना, इसे एक ट्यूब में रोल करना (रैगडॉल की तरह) शामिल है।

प्रक्रिया: अंकुरण कागज, फर्म पेपर कागज जैसे भूरे रंग या इसके समकक्ष का उपयोग करें। इसे समतल रखें और फिर पानी से गीली हुई अंकुरण कागज पर थोड़ी मात्रा में बीज रखें बीजों वाली कागज को को रोलिंग तरीके से रोल करें। फिर उसके बाद अंकुरण ट्रे में 30 डिग्री सेल्सियस के तापमान में रखें, लेकिन बीज कमरे के तापमान (21 डिग्री सेल्सियस) पर भी अंकुरित हो सकते हैं।

नोट: बीज को सड़ने से रोकने के लिए अत्यधिक पानी नहीं देना आवश्यक है। बहुत अधिक पानी ऑक्सीजन की कमी का कारण बनता है।



चित्र 3: रैगडॉल विधि का उपयोग करने के पश्चात् बीज अंकुरण

निष्कर्ष

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि खेती की सफलता की नींव अच्छे और गुणवत्तापूर्ण बीज पर आधारित होती है। बीज में संपूर्ण पौधे का भविष्य निहित होता है। बीज की सही पहचान, उसकी अंकुरण प्रक्रिया की समझ और अनुकूल परिस्थितियों की उपलब्धता से पौधे की स्वस्थ शुरूआत सुनिश्चित होती है एवम खेती अधिक सफल और टिकाऊ बन सकती है। पानी, हवा, तापमान, मिट्टी और प्रकाश जैसे कारक बीज अंकुरण और पौधे की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साथ ही वैज्ञानिक बीज उपचार और सरल बीज परीक्षण विधियाँ बीज की गुणवत्ता बढ़ाने और रोगों से बचाव में सहायक होती हैं। यह जानकारी छात्रों, किसानों और सामान्य पाठकों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से बीज का चयन और उपयोग करने में मदद करती है, जिससे बेहतर पौध वृद्धि और सफल खेती संभव हो पाती है।

फसलों के अदृश्य शत्रु पादप परजीवी सूत्रकृमि एवं प्रबंधन: किसानों की आय बढ़ाने मे सहायक

राशिद परवेज़, पंकज एवं वाघमारे चंद्रमणी दत्तात्रय
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थांन, नई दिल्ली

भारत में निरंतर बढती हुई जनसंख्या के कारण इस की बढ़ती हुई मांग के अनुरूप पूर्ति ना कर पाना भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए एक चिन्ता का विषय हैं। धान और गेहूं की फसल के उत्पादन में गिरावट के प्रमुख कारणों में से एक इनको हानि पहुँचाने वाले सूत्रकृमि की समस्या हैं। फसल की हानि सूत्रकृमि जनसंख्या घनत्व और अन्य फसल विकास की स्थिति पर निर्भर करती है। एक अनुमान के अनुसार गेहूं की फसल मे सूत्रकृमिनाशक उपचार के बाद 17 प्रतिशत हानि, सीधे बोए गए धान में 71 प्रतिशत और उपचारित पौधशाला-बेड से लिए गए प्रत्यारोपित धान में 29 प्रतिशत, अन उपचारित पौधशाला-बेड से लिए गए प्रत्यारोपित धान में 38 प्रतिशत हानि अंकित की गयी है।

सूत्रकृमि की समस्याओं के प्रति कृषकों का उचित समाधान न जानना स्थिति को और भी जटिल बना देता हैं। अतः प्रस्तुत लेख में धान और गेहूं के उत्पादन में बाधा पंहुचाने वाले जड़-गांठ सूत्रकृमि, *मेलेड़ोगाइन ग्रेमिनिकोला* (गोल्डन एंड बिर्चीफिल्ड, 1965) के द्वारा फसल के लक्षण, वितरण, एवं उनके प्रबंधन हेतू उचित नियन्त्रण तकनीकियों का उल्लेख किया गया हैं।

लक्षण

पौधशाला और खेत में धान की फसल का पीला पढ़ना, पौधों की असमान वृद्धि एव पत्तियों का आकार कम होना। सूत्रकृमि ग्रसित फसल जल्दी सूख जाती है। *एम. ग्रैमिनिकोला* अक्सर जड़ उतकों के कार्यों में बाधा पहुँचाता हैं। उनके द्वारा संक्रमित पौधों की जड़े मिट्टी से उचित पोषण एवं पानी नहीं ले पाती हैं। जिसके कारण पौधे के उपरी भागों में लक्षण उत्पन्न होते हैं जैसे, पोषण की कमी, शुष्कता, लवण की अधिकता व अन्य तनाव की परिस्थितियॉ उत्पन्न होती हैं। पौधों की वृद्धि रूक जाती हैं, पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा शाखायें कम निकलती हैं।

एम. ग्रैमिनिकोला संक्रमित जड़ों में गाँठें बन जाती हैं। प्रायः इन गाँठों को अलग नहीं किया जा सकता। मिट्टी में रहकर यह नई जडो को भेद कर उनके अन्दर घुस जाते है तथा पानी और खाना ले जाने वाली कोशिकाओं पर आक्रमण करते हैं। तत्पश्चात यह सूत्रकृमि गोलाकार हो कर जड़ो में गाँठें पैदा करते हैं। इन गाँठों के कारण पौधे मृदा में पोषक तत्व तथा पानी की उपलब्धता होते हुए भी पर्याप्त मात्रा में उसे ग्रहण नहीं कर पाते।

एम. ग्रैमिनिकोला के नर ऐम्फिमिक्सिस और अर्धसूत्री विभाजनिक अनिषेकजनन द्वारा प्रजनन करने में सक्षम हैं। लगभग 200 से 500 आंशिक रूप से भ्रूणित अंडे जिलेटिनस डिंब मैट्रिक्स में जमा रहते हैं। भ्रूणजनन के 4-6 दिनों के बाद प्रथम अवस्था का शिशु सूत्रकृमि तथा 2-3 दिनों में द्वितीय अवस्था का शिशु सूत्रकृमि विकसित होता है। द्वितीय अवस्था के शिशु सूत्रकृमि अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों, 20-30 डिग्री सेल्सियस के बीच तापमान तथा उपयुक्त नमी में अंडे से बाहर निकलते है। अंडे से बाहर निकलने की दर धीमी होती है यानी कई हफ्तों तक चलती है।

अंडे से बाहर न निकले द्वितीय अवस्था के शिशु सूत्रकृमि अंडे के अंदर कई हफ्तों तक शुष्क अवस्था तथा भोजन के अभाव मे रह सकता है। द्वितीय अवस्था के शिशु सूत्रकृमि पौधे की जड़ों में प्रवेश करके स्निश्राउम और गाँठें बनाता है। द्वितीय अवस्था के शिशु सूत्रकृमि में फुलाव संक्रमित एवं निर्मोचन के 3-4 दिनों बाद आता है और यह तृतीय अवस्था, तत्पश्चात चतुर्थ अवस्था, वयस्क मादा तथा नर मे परिवर्तित हो जाता है। तृतीय एवं चतुर्थ अवस्था के शिशु सूत्रकृमियों में स्टाइलेट न होने के कारण यह अवस्था संक्रमणकारी नहीं होती। *एम. ग्रैमिनिकोला* धान और गेहूं की फसल मे अपना अंडे से अंडे का जीवन चक्र 27-30 डिग्री सेल्सियस के बीच तापमान पर लगभग 25-28 दिनों में पूरा कर लेते हैं। सर्दियों के दौरान कम तापमान पर गेहूं की फसल मे इनका जीवन चक्र 65 दिनों तक लंबा रहता है। वयस्क नर 13-16 दिनों तक देखा जा सकता है और इसके बाद यह 3-4 दिन के बाद नये अंडे देते है।

दिल्ली की परिस्थितियों के अंतर्गत एक विशिष्ट धान-गेहूं फसल पद्धति में, इस सूत्रकृमि की धान नर्सरी में एक पीढ़ी, छोटी अवधि के मोटे धान में दो पीढ़ी, बासमती धान मे तीन पीढ़ियां और नवंबर में बोये गए गेहूं में दो पीढ़ी और दिसंबर में बोये गए गेहूं में एक पीढ़ी जीवन चक्र पूरा करती है। इस प्रकार, एक वर्ष में यह सूत्रकृमि 4-6 पीढ़ियों जीवन चक्र पूरा कर सकती हैं।

वितरण

एम. ग्रैमिनिकोला ग्रसित धान मे जड़-गाँठ रोग भारत के अधिकांश राज्यों जैसे, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, बिहार, छत्तीसगढ़ पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा उत्तर-पूर्वी राज्यों सहित दुनियाँ के सभी धान की खेती करने वाले क्षेत्रों में प्रचलित है। जहां चावल एक वर्ष में एक से अधिक फसल के रूप में उगाया जाता है वहां एस सूत्रकृमि की समस्या विशेष रूप से गंभीर हैं। जम्मू, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली और उत्तर प्रदेश सहित उत्तर भारत मे धान पौधशाला मे संक्रमित पौधों का खेतों में रोपण के बाद अंकित किया गया।

प्रबंधन तकनीकिया

सूत्रकृमियों की समस्या को निम्नलिखित नियन्त्रण विधियों द्वारा समाधान किया जा सकता है। इन नियन्त्रण विधियों को रोगों की प्रारम्भिक अवस्था में अपनाने से पौधों को सूत्रकृमियों द्वारा अत्यधिक हानि से बचाया जा सकता है।

फसल चक्र

- धान और गेहूं की दोनों फसलों को एक साल मे खेती न करना जड़-गांठ सूत्रकृमि *एम. ग्रैमिनिकोला* की जनसंख्या घनत्व को कम करने में प्रभावी होता है।
- गेहूं के स्थान पर चना या सरसों की खेती करना जड़-गांठ सूत्रकृमि जनसंख्या घनत्व कम करने मे सहायक होता है।
- आमतौर पर किसान खरीफ में अन्य फसलों के स्थान पर धान की फसल को बदलने के लिए तैयार नहीं होते हैं।
- खरीफ में तिल की खेती करके जड़-गांठ सूत्रकृमि जनसंख्या को कम कर सकते हैं।

ग्रीष्मकालीन जुताई

ग्रीष्म काल मे गेहूं की फसल की कटाई के बाद खेत की 15 दिनों के अंतराल पर दो बार गहराई से जुताई करने से सूत्रकृमि जनसंख्या 70 प्रतिशत से अधिक की कमी तथा आगामी धान की फसल को हानि पंहुचाने वाले सूत्रकृमियों के प्रबंधन मे भी प्रभावी होती है।

मृदा सौरीकरण

मृदा सौरीकरण के तहत गर्मी में पतली पॉलिथीन शीट (25-60 माइक्रोमीटर) की 3-4 सप्ताह तक झपनी करने से 15 सेंटीमीटर ऊपरी परत में सूत्रकृमि जनसंख्या को कम करने में अत्यधिक प्रभावी पाया गया। जब मृदा का तापमान 40-50 डिग्री सेल्सियस तक पहुंचता है तब खेतो मे 10 सेंटीमीटर तत्पश्चात 15 सेंटीमीटर ऊपरी परत में सूत्रकृमि जनसंख्या कम हो जाती है परंतु सूत्रकृमि गहराई मे मौजूद रहते है। मृदा सौरीकरण बहुत महंगा होता है। अत: नर्सरी-बेड कि लिए यह नियंत्रण विधि उपयोगी है।

सूत्रकृमिनाशक

- सूत्रकृमिनाशक जैसे, कार्बोफ़्यूरान* @ 1 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या फोरेट* @ 1 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर से खेतों को रोपण के 2 दिन बाद उपचारित करने से सूत्रकृमि के प्रति प्रभावी पाया गया (*प्रतिबंधित क्षेत्रो के अतिरिक्त)।
- क्रमश: रोपण के 2 दिन तथा 40 दिनों के बाद कार्बोफ्यूरान* @ 0.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या फोरेट* @ 0.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर से उपचारित करने से सूत्रकृमि जनसंख्या मे कमी अंकित की गई है (*प्रतिबंधित क्षेत्रो के अतिरिक्त)।
- नीम उत्पादों जैसे, अचूक @ 5 प्रतिशत भार/भार, निंबेसीडाइन, नीममार्क, नीम सीड करनाल आदि के साथ धान के बीज को उपचरित करने से सूत्रकृमि जनसंख्या मे कमी आती है और फसल के लिए सूत्रकृमि मुक्त रोपण सामग्री मिलती है।

एकीकृत सूत्रकृमि प्रबंधन

उपरोक्त नियंत्रण विधियों का उपयोग करके काफी स्तर तक सूत्रकृमि जनसंख्या नियंत्रण कर सकते है, परंतु इनमें से कोई भी नियंत्रण विधि जो सूत्रकृमि प्रबंधन मे शत प्रतिशत प्रभावी, सुरक्षित और किफायती हो। फसल चक्र, मृदा सौरीकरण तथा कम मात्रा में सूत्रकृमिनाशकों के संयुक्त संयोजन को तैयार करके उपयोग करने से न केवल सूत्रकृमियो को नियंत्रण कर सकते हैं बल्कि मिट्टी से उत्पन्न अन्य रोगज़नक़ों तथा खरपतवारों के विरुद्ध भी प्रभावी नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

पौधशाला प्रबंधन

- पौधशाला के लिए ऐसी स्थान का चयन करते है, जहां पिछले दो वर्षों में धान नहीं उगाया गया हो।
- मई माह में तीन सप्ताह तक रंगहीन, पतली पॉलिथीन शीट (25 से 60 माइक्रोमीटर) से चिन्हित क्षेत्र के नर्सरी-बेड को ढककर मृदा सौरीकरण करें।
- कार्बोफ़्यूरान* या फोरेट* @ 0.2 ग्राम सक्रिय तत्व बुवाई के समय मिट्टी की ऊपरी 5 सेंटीमीटर परत के साथ मिलाएँ। (*प्रतिबंधित क्षेत्रो के अतिरिक्त)।

खेत प्रबंधन

- मई-जून में खेत की 15 दिनों के अंतराल पर दो बार गहरी जुताई करें।
- उपचारित पौधशाला से प्राप्त सूत्रकृमि-मुक्त, स्वस्थ रोपण सामग्री का उपयोग करें।
- गेहूं की देर से बोयी जाने वाली प्रजातियों को नवंबर से लेकर मध्य दिसम्बर तक देर से बुवाई करना सूत्रकृमियों के प्रबंधन में प्रभावी होता है।
- यदि सूत्रकृमियों का प्रकोप अधिक हो, तो रबी मौसम में गेहूँ के स्थान पर सरसों की खेती करना उपयुक्त होता है।

उपरोक्त नियंत्रण विधियों को किसानों के खेतों में सफलतापूर्वक प्रदर्शित किया गया है। धान-गेहूं फसल प्रणाली में औसतन लागत : लाभ अनुपात, 1 : 3.8 है और धान की लगभग 17 प्रतिशत अधिक पैदावार अकित की गई है।

निष्कर्ष

उपरोक्त उल्लेखित सूत्रकृमियों द्वारा धान और गेहूं की दोनों फसलों में पंहुचाने वाली हानि से बचा जा सकता हैं। यदि हम समय पर उनका उचित नियन्त्रण विधियां अपनाकर उनका प्रबंधन कर दें। जिससे न सिर्फ फसल को सुरक्षित किया जा सकता हैं, बल्की उपज भी बढाई जा सकती हैं। जब उपज बढेगी तब निश्चित ही किसान की आय भी बढेगी, जिससे कृषक खुशहाल होने के साथ –साथ हमे धान और गेहूं के लिए अन्य देशों पर भी निर्भर नहीं होना पढेगा।



रविन्द्र माणिकराव मेटकर

एक दूरदर्शी कृषिउद्यमी और मुर्गीपालन उद्योग के अग्रणी

कृषि उद्यमी | मुर्गीपालन उद्योग के प्रणेता | किसानों के प्रेरणास्रोत

अमरावती जिले के एक छोटे से गाँव से लेकर वैश्विक मंच तक का प्रेरणादायी सफर तय करने वाले रविन्द्र माणिकराव मेटकर कठोर परिश्रम एवं नवाचार के प्रतीक हैं।

अपने उत्कृष्ट कृषि उद्यम से वे लाखों किसानों को नई दिशा देते स हैं और ग्रामीण भारत के लिए प्रेरणा बने हैं।

साधारण शुरुआत
सन् 1984 में मात्र 16 वर्ष की आयु में पिता से मिली ₹ 3,000 की सहायता से मुर्गीपालन की शुरुआता।

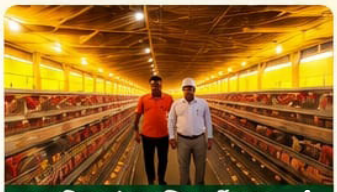
₹ 15 करोड़ का वार्षिक कारोबार
परिश्रम, नियोजन और सतत नवाचार से कृषि उद्यम को 15 करोड़ रूपये के वार्षिक कारोबार तक पहुँचाया।

1.8 लाख+ लेयर्स मुर्गियों
प्रतिदिन लगभग 1.2 लाख अंडों का उत्पादन बहुताधुनिक एवं स्वचालित प्रणाली से।

50 एकड़ समन्वित कृषि
मुर्गीपालन, कृषि और संबद्ध गतिविधियों का सफल विविधीकरण तथा भूमि का कुशल उपयोग।

50 लाख+ किसानों के मार्गदर्शक
देशभर में हजारों प्रशिक्षण, व्याख्यान और नवाचारों के माध्यम से 50 लाख से अधिक किसानों को मार्गदर्शन।

राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सम्मान
ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में आमंत्रित वक्ता एवं एलबीएसएनएए मसूरी के प्रशिक्षुओं को संबोधित करने का गौरव।


आधुनिक एवं स्वचालित मुर्गीपालन फार्म


उच्च गुणवत्ता वाले अंडे, गुणवत्ता की गारंटी


ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, लंदन में आमंत्रित वक्ता


एलबीएसएनएए, मसूरी के प्रशिक्षुओं को व्याख्यान

> "मेरी सफलता हर किसान के प्रति समर्पित है। जब किसान समृद्ध होंगे, तभी देश आगे बढ़ेगा।"
> — रविन्द्र माणिकराव मेटकर

1.8 लाख+ लेयर्स मुर्गियाँ	1.2 लाख अंडे प्रतिदिन	50 एकड़ कृषि भूमि	₹15 करोड़ वार्षिक कारोबार	50+ लाख किसान प्रशिक्षित	40+ वर्षों का अनुभव

समर्पण और दृढ़ निश्चय की प्रेरणादायी यात्रा

1984 — ₹ 3,000 से मात्र 100 ब्रायलर मुर्गियों के साथ मुर्गीपालन की शुरुआत

1984-1990 — 5 वर्षों में छोटी फैक्टरी से तेजी से बढ़ता फार्म

1990-2006 — व्यवसाय का क्रमिक विस्तार, हजारों मुर्गियों का पालन

2006 — बर्ड फ्लू संकट को पार कर व्यवसाय का विविधीकरण कर कृषि क्षेत्र में और सशक्त आधार

2006-2020 — लगभग 1.8 लाख लेयर्स मुर्गियों का अत्याधुनिक स्वचालित फार्म स्थापित

2023 एवं आगे — वैश्विक स्तर पर मान्यता ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय द्वारा आमंत्रण तथा लाखों किसानों के प्रेरणास्रोत

मुख्य कार्य क्षेत्र

- मुर्गीपालन
- समन्वित कृषि
- जैविक एवं प्राकृतिक खेती
- कचरे से संम्पदा समाधान
- किसान प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन
- कृषि नवाचार एवं प्रौद्योगिकी

सतत एवं प्राकृतिक कृषि


कम लागत – अधिक लाभ

स्वदेशी जैव उर्वरक | अपशिष्ट प्रबंधन | पर्यावरण अनुकूल खेती | स्वस्थ व सुरक्षित भविष्य

किसानों को सशक्त बनाना


आज के प्रशिक्षण से कल का समृद्ध किसान

ऑक्सफोर्ड का आमंत्रण


"ग्लोबल रिसर्च सम्मेलन" में मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित
— "हर मनुष्य के हित में नवाचार" विषय पर

सम्मान एवं उपलब्धियाँ

- ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, लंदन – आमंत्रित वक्ता
- एलबीएसएनएए मसूरी – आमंत्रित वक्ता
- राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय कृषि एवं मुर्गीपालन पुरस्कार
- लाखों किसानों के प्रेरणास्रोत के रूप में मान्यता

> सफलता केवल व्यक्तिगत विकास की नहीं, दूसरों को आगे बढ़ाने की है।
> आइए, मिलकर कृषि, पशुपालन और ग्रामीण समृद्धि के लिए एक सशक्त भारत का निर्माण करें।"
> — रविन्द्र माणिकराव मेटकर

संपर्क करें

9881303702
smmetkar68@gmail.com
म्हसला गांव (अंजनगांव बाड़ी) जिला अमरावती, महाराष्ट्र, भारत

समृद्ध किसान | समृद्ध भारत | सतत और सशक्त भविष्य का निर्माण

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

वार्षिक शुल्क ₹150/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25841039

ई-मेंल: incharge_atic@iari.res.in

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित